अल-रिसाला

सितम्बर-अक्टूबर 2022

अल-रिसाला

सितम्बर-अक्टूबर 2022

CPS International
centre for peace & spirituality

माहनामा 'अल-रिसाला' को हिंदी स्क्रिप्ट में लाने की यह हमारी एक कोशिश है। मुश्किल उर्दू अल्फ़ाज़ को भी आसान कर दिया गया है, ताकि ज़्यादा-से-ज़्यादा लोग इसे पढ़कर फ़ायदा उठाएँ और अपनी ज़िंदगी, अपनी शख़्सियत में मुस्बत (positive) बदलाव ला सकें।

नीचे दी गई हमारी वेबसाइट और सोशल मीडिया पेजिस से मज़ीद फ़ायदा उठाएँ।

ख़ुसूसी शुमारा

शुक्र : एक अज़ीम इबादत

(यह शुमारा शुक्र के मौज़ू पर आने वाली नई किताब के कुछ चुने हुए मज़ामीन पर मुश्तमिल है।)

संपादकीय टीम

मोहम्मद आरिफ़, फ़रहाद अहमद

ख़ुर्रम इस्लाम क़ुरैशी, राजेश कुमार

Centre for Peace and Spirituality International

1, Nizamuddin West Market,

New Delhi-110013

info@cpsglobal.org

www.cpsglobal.org

cpsglobal.org

twitter.com/WahiduddinKhan

facebook.com/maulanawkhan

youtube.com/CPSInternational

+91-99999 44118

t.me/maulanawahiduddinkhan

linkedin.com/in/maulanawahiduddinkhan

instagram.com/maulanawahiduddinkhan

To order books of

Maulana Wahiduddin Khan, please contact

Goodword Books

Tel. 011-41827083,

Mobile: +91-8588822672

E-mail: sales@goodwordbooks.com

Goodword Bank Details

Goodword Books

State Bank of India

A/c No. 30286472791

IFSC Code: SBIN0009109

Nizamuddin West Market Branch

विषय-सूची

शुक्र का अमल	4
शुक्र एक आला इबादत	5
शुक्र की अहमियत	12
शुक्र : एक क़ुर्बानी का अमल	13
शुक्र से इज़ाफ़ा	15
सब्र व शुक्र	16
शुक्र की तर्बियत	19
इंसान और निज़ाम-ए-रबूबियत	21
सब कुछ ख़ुदा का अतिया	23
शुक्र के दो दर्जे	26
जज़्बात-ए-शुक्र की बेदारी	28
शुक्र का एहसास	30
आला शुक्र	31
शुक्र-ए-क़लील, शुक्र-ए-कसीर	32
शुक्र सबसे बड़ी इबादत	34
शुक्र में जीना सीखिए	37
शुक्र का मुहर्रिक	38
फ़ख़्र और शुक्र	39

इंसान का एतिराफ़	41
दौर-ए-शुक्र	42
शुक्र, न कि शिकायत	44
इज़ाफ़ा-ए-ईमान	47
शुक्र का एक आइटम	49
बोलने की सलाहियत	50
शुक्र की नफ़्सियात में जीना	52
शुक्र और ना-शुक्री	53
शुक्र या सरकशी	55
शुक्र और संजीदगी	56
बे-ख़बर इंसान	58
ना-शुक्री नहीं	60
दौर-ए-साइंस, दौर-ए-शुक्र	62
आलमी शुक्र	63
मैं ख़ुदा का कितना मक़रूज़ हूँ	66
शुक्र की हक़ीक़त	67

शुक्र का अमल

क़ुरआन का आग़ाज़ बिस्मिल्लाह से होता है। बिस्मिल्लाह के बाद सबसे पहली आयत यह है—

الحَمدُ لِلَّهِ رَبِّ العالَمِين.

"शुक्र है ख़ुदावंद-ए-आलम का।" (1:2)

क़ुरआन की इस आयत से शुक्र की अहमियत मालूम होती है। हक़ीक़त यह है कि इस्लाम के तमाम आमाल में शुक्र ही एक ऐसा अमल है, जिसे इंसान अपनी निस्बत से आलातरीन सूरत में कर सकता है। दूसरे तमाम आमाल, मसलन इबादत और अख़्लाक़ और मामलात की अदायगी में मुख़्तलिफ़ अस्बाब से कुछ-न-कुछ कमी रह जाती है, लेकिन शुक्र का ताल्लुक़ दिल और दिमाग़ से है और जिस चीज़ का ताल्लुक़ दिल और दिमाग़ से हो, उसके बारे में यह मुमकिन होता है कि आदमी उसे कामिलतरीन सूरत में अदा कर सके। यहाँ वह अपने तमाम जज़्बात और अपनी सारी सोच को ख़ुदा के सामने पेश कर सकता है। यह ख़ुसूसियत सिर्फ़ शुक्र को हासिल है।

शुक्र क्या है? शुक्र दरअसल एतिराफ़ का दूसरा नाम है। इंसानी मामलों में जिस चीज़ को एतिराफ़ कहा जाता है, उसी का नाम ख़ुदाई मामले में शुक्र है। हर आदमी के लिए यह ज़रूरी है कि वह अपने शुऊर को इतना ज़्यादा बेदार करे कि हर मिली हुई चीज़ उसे कामिल मानों में ख़ुदा का अतिया दिखाई दे। वह कामिल जज़्बा-ए-एतिराफ़ के साथ यह कह सके कि ख़ुदाया, तेरा शुक्र है। ख़ुदा की नेमतों और रहमतों का कामिल एहसास करके यह कह पढ़ना कि 'अल्हम्दुलिल्लाह रब्बिल आलमीन,' यही शुक्र है और यही शुक्र बिला शुब्हा सबसे बड़ी इबादत है।

मौजूदा दुनिया में वह चीज़ बहुत बड़े पैमाने पर मौजूद है, जिसे 'लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम' कहा जाता है। यहाँ की हर चीज़ इस तरह बनाई गई है कि वह पूरी तरह से इंसान की ज़रूरत के मुताबिक़ है। ऐसी हालत में यह होना चाहिए कि इंसान जब इस दुनिया में चले-फिरे और इसे इस्तेमाल करे तो वह शुक्र और एतिराफ़ के जज़्बे से भरा हुआ हो। मौजूदा दुनिया की तमाम फ़ितरी चीज़ें इंसान को पूरी तरह से मुफ़्त में मिली हुई हैं, सच्चा शुक्र ही इन चीज़ों की क़ीमत है। जो आदमी यह क़ीमत अदा न करे, उसकी हैसियत इस दुनिया में ज़ालिम की है और ज़ालिम के लिए बिला शुब्हा सज़ा है, न कि इनाम। शुक्र के एहसास के बग़ैर इस दुनिया में रहना बिला शुब्हा एक नाक़ाबिल-ए-माफ़ी जुर्म की हैसियत रखता है— औरत के लिए भी और मर्द के लिए भी।

शुक्र एक आला इबादत

शुक्र क्या है? शुक्र उस दाख़िली कैफ़ियत का नाम है, जो किसी नेमत के गहरे एहसास से आदमी के अंदर पैदा होती है। अंग्रेज़ी में इसे 'ग्रेटफ़ुलनेस' (gratefulness) कहा जाता है। अरबी ज़बान की मशहूर डिक्शनरी 'लिसान अल-अरब' (जिल्द 4, सफ़्हा 423) के मुताबिक़, एहसान की मारिफ़त और इसके तज़्किरे का नाम शुक्र है।

الشُّكْرُ:عِرْفانُ الإِحسان ونَشْرُه.

अल-राग़िब अल-इसफ़हानी की किताब 'अल-मुफ़रदात फ़ी ग़रीब अल-क़ुरआन' (सफ़्हा 265) में बताया गया है कि शुक्र का मतलब है नेमत के बारे में सोचना और इसका इज़्हार करना—

الشُّكْرُ:تصوّر النّعمة وإظهارها.

मुफ़स्सिर अल-क़ुर्तुबी ने लिखा है—

الشكر معرفة الإحسان والتحدث به.

"शुक्र नाम है एहसान-शनासी का और इसके एतिराफ़ का।"

(तफ़्सीर अल-क़ुर्तुबी, जिल्द 2, सफ़्हा 172)

नेमत का एतिराफ़ (acknowledgement) एक आला इंसानी सिफ़त है। यह एतिराफ़ जब ख़ुदा की निस्बत से हो तो इसी का नाम शुक्र है। इंसान के ऊपर ख़ुदा की नेमतें सबसे ज़्यादा हैं, इसलिए इंसान को चाहिए कि वह सबसे ज़्यादा ख़ुदावंद-ए-ज़ुलजलाल का शुक्र अदा करे। हदीस में आया है कि पैग़ंबर-ए-इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपनी एक दुआ में फ़रमाया—

رَبِّ اجْعَلْنِي لَكَ شَكَّارًا.

"ऐ मेरे रब! तू मुझे अपना बहुत ज़्यादा शुक्र करने वाला बना।"

(सुनन इब्न माजा, हदीस नंबर 3831; सुनन अल-तिरमिज़ी, हदीस नंबर 3551; मुस्नद अहमद, हदीस नंबर 1997)

क़ुरआन में बार-बार यह कहा गया है कि ए लोगो! ख़ुदा के शुक्रगुज़ार बंदे बनो। मसलन मीठे पानी का ज़िक्र करने के बाद अल्लाह तआला ने फ़रमाया—

فَلَوْلَا تَشْكُرُونَ.

"तुम शुक्र क्यों नहीं करते?" (56:70)

इंसान से जो चीज़ सबसे ज़्यादा मतलूब है, वह यही शुक्र है। शैतान की सारी कोशिश यह होती है कि वह इंसान को शुक्र के रास्ते से हटा दे। क़ुरआन के मुताबिक़, इंसान की इब्तिदा के वक़्त उसने ख़ुदा को चैलेंज करते हुए कहा था कि मैं इंसानों को बहकाऊँगा, यहाँ तक कि तू

उनमें से अक्सर लोगों को अपना शुक्रगुज़ार न पाएगा—

وَلا تَجِدُ أَكثَرَهُم شاكِرينَ.

'And you will not find most of them grateful.' (7:17)

क़ुरआन में मुख़्तलिफ़ अंदाज़ से यह बात कही गई है कि ख़ुदा के बंदों में बहुत कम ऐसे लोग हैं, जो शुक्र करने वाले हैं—

وَقَليلٌ مِن عِبادِيَ الشَّكورُ.

(34:13)

शुक्र का मतलब अगर यह हो कि आदमी ज़बान से शुक्र के अल्फ़ाज़ बोलता रहे, तो ऐसे लोग हमेशा बहुत ज़्यादा रहे हैं और आज भी वे बहुत ज़्यादा हैं। ऐसे लोग बेशुमार हैं, जो अपनी गुफ़्तगू के दौरान बार-बार 'अल्हम्दुलिल्लाह', 'अल्लाह का शुक्र है' और 'अल्लाह का फ़ज़्ल है' जैसे अल्फ़ाज़ बोलते रहते हैं। ऐसी हालत में दुनिया बज़ाहिर शुक्र करने वालों से भरी हुई है, फिर मज़्कूरा क़ुरआनी बयान का क्या मतलब है कि लोगों में बहुत कम हैं, जो शुक्र करने वाले हैं।

असल यह है कि शुक्र की दो किस्में हैं— लिसानी शुक्र और क़ल्बी शुक्र। लिसानी शुक्र को 'नॉर्मल शुक्र' (normal) और क़ल्बी शुक्र को 'थ्रिलिंग'(thrilling) शुक्र' कह सकते हैं। ख़ुदा की ख़ुदाई शान के मुताबिक़, शुक्र सिर्फ़ वह है, जो थ्रिलिंग शुक्र हो। नॉर्मल शुक्र सिर्फ़ एक लिप सर्विस है। इस क़िस्म का शुक्र ख़ुदा को मतलूब नहीं। इसी के साथ ज़रूरी है कि ख़ुदा के लिए इंसान का शुक्र एक बढ़ोतरी वाला शुक्र हो। जो शुक्र एक हालत पर क़ायम हो जाए, वह एक स्पिरिट से ख़ाली शुक्र है और स्पिरिट से ख़ाली शुक्र वह शुक्र नहीं, जो ख़ुदा के नज़दीक मतलूब यानी पसंदीदा शुक्र की हैसियत रखता है।

थ्रिलिंग शुक्र सिर्फ़ उस शख़्स को मिलता है, जो ख़ुदा के एहसानात (blessings) पर मुसलसल ग़ौर करता रहे। इंसान के ऊपर ख़ुदा के एहसानात ला-महदूद हैं। इसलिए जो आदमी इस पहलू से ग़ौर-ओ-फ़िक्र करता रहे, वह हर वक़्त एक नए ख़ुदाई एहसान को दरियाफ़्त करेगा, वह हर वक़्त एक नए सबब-ए-शुक्र का तजुर्बा करेगा। इसके ये तजुर्बात कभी ख़त्म न होंगे, इसलिए उसके अंदर शुक्र-ए-ख़ुदावंदी का एहसास भी मुसलसल तौर पर ज़िंदा रहेगा।

मैं अपने दफ़्तर में बैठा हुआ था। अचानक टेलीफ़ोन की घंटी बजी। मैंने सोचा कि इंसान की सुनने की ताक़त भी कैसी अजीब है कि इसके कान में बेशुमार क़िस्म की आवाज़ें आती हैं। वह हर आवाज़ को जुदा (differentiate) करके उसे अलग से पहचान लेता है। इसके बाद मैंने अपने एक हाथ को हरकत दी और बात करने के लिए रिसीवर को उठाया। दोबारा मैंने सोचा कि मेरे जिस्म में बहुत-से आज़ा (organs) हैं, लेकिन मेरे दिमाग़ ने सिर्फ़ एक हाथ को हरकत दी कि वह रिसीवर को उठाए। इस अमल में आँख का भी एक हिस्सा था, क्योंकि अगर आँख अपना अमल न करती तो मुझे यह मालूम ही न होता कि रिसीवर कहाँ है।

जब मैंने टेलीफ़ोन पर बात करना शुरू किया तो मालूम हुआ कि टेलीफ़ोन के दूसरी तरफ़ जो आदमी है, वह अंग्रेज़ी ज़बान में बोल रहा है। मैं उसकी बात को पूरी तरह समझ रहा था। मैंने सोचा कि मेरी मादरी ज़बान उर्दू है और दूसरे शख़्स की ज़बान अंग्रेज़ी। मैं किसी बात को सिर्फ़ उस वक़्त समझ पाता हूँ, जबकि मैं उसे उर्दू अल्फ़ाज़ में ढाल लूँ। मैंने सोचा कि दिमाग़ कैसी अजीब नेमत है, जो अपने अंदर अनोखी सलाहियत रखता है कि वह अंग्रेज़ी अल्फ़ाज़ को फ़ौरन कहने वाले की बात को बिना किसी देरी के मेरे लिए समझने लायक़ बना दे।

इस तरह की बहुत-सी बातें उस वक़्त मेरे ज़ेहन में आती रहीं। मैं एक तरफ़ दूर के एक शख़्स से टेलीफ़ोन पर बात कर रहा था और दूसरी तरफ़ ऐन उसी वक़्त मैं ख़ुदा के बारे में थ्रिलिंग शुक्र का तजुर्बा कर रहा था। यह तजुर्बा इतना ज़्यादा शदीद था, जैसे कि शुक्र का एक दरिया मेरे सीने में जारी हो गया हो। इसी तरह हर लम्हा इंसान को ऐसे तजुर्बात पेश आते हैं, जिनके अंदर शुक्र का समंदर छिपा हुआ होता है। इस आला शुक्र तक आपकी पहुँच सिर्फ़ ग़ौर-ओ-फ़िक्र के ज़रिये हो सकती है। हक़ीक़त यह है कि सोच ही आला शुक्र का दरवाज़ा है। जिस आदमी के अंदर सोच न हो, उसके अंदर शुक्र भी न होगा। ऐसा आदमी हर चीज़ को 'फॉर ग्रांटेड' लेता रहेगा।

जो इंसान चीज़ों को 'फॉर ग्रांटेड' तौर पर लेगा, वह ख़ुदा की नेमतों की कोई क़द्र नहीं करेगा। वह शुक्र के समंदर के दरमियान रहते हुए भी थ्रिलिंग शुक्र का तजुर्बा नहीं करेगा। यही वे लोग हैं, जिनके बारे में क़ुरआन में आया है—

لَهُمْ قُلُوبٌ لَّا يَفْقَهُونَ بِهَا وَلَهُمْ أَعْيُنٌ لَّا يُبْصِرُونَ
بِهَا وَلَهُمْ ءَاذَانٌ لَّا يَسْمَعُونَ بِهَآ أُوْلَٰٓئِكَ كَٱلْأَنْعَٰمِ
بَلْ هُمْ أَضَلُّ أُوْلَٰٓئِكَ هُمُ ٱلْغَٰفِلُونَ .

"उनके दिल हैं जिनसे वे समझते नहीं, उनकी आँखें हैं जिनसे वे देखते नहीं, उनके कान हैं जिनसे वे सुनते नहीं। वे ऐसे हैं, जैसे चौपाए, बल्कि उनसे भी ज़्यादा बेराह, यही लोग हैं ग़ाफ़िल।"
(7:179)

असल यह है कि हर चीज़ के दो पहलू होते हैं। एक, उसका इब्तिदाई और ज़ाहिरी पहलू और दूसरा, उसका ज़्यादा गहरा पहलू। चीज़ों का ज़ाहिरी पहलू हर आदमी को किसी कोशिश के बग़ैर अपने आप दिखाई देता है, लेकिन इसका जो गहरा पहलू है, वह सिर्फ़ सोचने

के बाद किसी को समझ में आता है। आला शुक्र का तजुर्बा करने के लिए आदमी को यह करना पड़ता है कि वह चीज़ों के गहरे पहलू पर ग़ौर करे, ताकि वह एक मामूली चीज़ को ग़ैर-मामूली तौर पर देख सके। 'It is the result of taking an ordinary thing as extratraordinary'

एक दिन मुझे प्यास लगी। मेरे सामने मेज़ पर शीशे का एक ग्लास पानी से भरा हुआ रखा था। मैंने उसे अपने हाथ में लिया तो इसे देखकर मेरे दिमाग़ में एक फ़िक्री तूफ़ान बरपा हो गया। अचानक एक पूरी तारीख़ मेरे ज़ेहन में आ गई। मेरी ज़बान से निकला कि ख़ुदाया, तेरा शुक्र है कि तूने पानी जैसी नेमत इंसान को अता की। यह कोई सादा बात नहीं थी। यह एक 'सुपर' (super) शुक्र था, जिसने मेरी पूरी शख़्सियत में तूफ़ान बरपा कर दिया था। मैंने सोचा कि कई बिलीयन साल पहले ऐसा हुआ कि दो गैसों— ऑक्सीजन और हाइड्रोजन— के मिलने से पानी जैसी लिक्विड चीज़ बनी। यह पानी गहरे समंदरों में ज़ख़ीरा हो गया। इसके बाद ख़ुदा ने इसे महफ़ूज़ रखने (preservative) के लिए इसमें दस फ़ीसद नमक मिला दिया। यह पानी सीधे तौर पर इंसान के लिए नाक़ाबिल-ए-इस्तेमाल था। इसके बाद ख़ुदा ने एक आलमी निज़ाम के तहत पानी को नमक से अलग करने के लिए 'डी-सैलिनेशन' (desalination) का एक आफ़ाक़ी अमल जारी किया। इसके बाद यह हुआ कि समंदरों का खारा पानी मीठा पानी बनकर बारिश की सूरत में हमें हासिल हो गया।

यह एक मिसाल है, जिससे अंदाज़ा होता है कि थ्रिलिंग शुक्र की तौफ़ीक़ किसी आदमी को किस तरह हासिल होती है। इसका वाहिद ज़रिया सोच है। यह दरअसल सोच है, जो आदमी को इस क़ाबिल बनाती है कि वह सुपर शुक्र का हदिया अपने रब के हुज़ूर पेश करे।

सोच के सिवा कोई भी दूसरी चीज़ नहीं है, जो आदमी को इस आला शुक्र का तजुर्बा कराए, जो कि ख़ुदा को इंसान से मतलूब है।

जैसा कि ऊपर अर्ज़ किया गया, पैग़ंबर-ए-इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने दुआ करते हुए फ़रमाया—

ربّ اجْعَلنِی لک شکّاراً.

कोई इंसान शक्कार या बहुत ज़्यादा शुक्र करने वाला कैसे बनता है? इसका तरीक़ा यह नहीं है कि आदमी शुक्र के कलिमे को हज़ारों बार दोहराए या और कोई वज़ीफ़ा पढ़े। इसे हासिल करने का वाहिद ज़रिया ग़ौर-ओ-फ़िक्र है। मज़्कूरा दुआ का मतलब यह है कि ख़ुदाया, तू मुझे रब्बानी ग़ौर-ओ-फ़िक्र की तौफ़ीक़ दे, ताकि मेरे अंदर आला शुक्र की कैफ़ियात पैदा हों, जो कि हक़ीक़ी मानों में किसी इंसान को ख़ुदा का शुक्रगुज़ार बंदा बनाती हैं। आप क़ुरआन का मुताला करें तो आप पाएँगे कि क़ुरआन में शुक्र को सब्र के साथ जोड़ा गया है। मसलन क़ुरआन में दुनिया की नेमतों का ज़िक्र करते हुए इरशाद हुआ है—

إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَآيَاتٍ لِكُلِّ صَبَّارٍ شَكُور.

इसमें निशानियाँ है हर उस इंसान के लिए, जो बहुत ज़्यादा सब्र करने वाला और बहुत ज़्यादा शुक्र करने वाला हो। (31:31)

इस क़िस्म की आयात पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि क़ानून-ए-इलाही के मुताबिक़, आला शुक्र की तौफ़ीक़ सिर्फ़ उन लोगों को मिलती है, जो बहुत ज़्यादा सब्र करते हुए इस दुनिया में ज़िंदगी गुज़ारें।

ऐसा क्यों है? इसका सबब यह है कि मौजूदा दुनिया में इंसान को मुकम्मल आज़ादी दी गई है। अक्सर ऐसा होता है कि इंसान अपनी आज़ादी का ग़लत इस्तेमाल करता है। इस बिना पर यहाँ मुख़्तलिफ़

क़िस्म की बुराइयाँ (evils) पैदा हो जाती हैं। यह सूरत-ए-हाल ख़ुदा के क़ानून की बिना पर है, इंसान उसे बदलने पर क़ादिर नहीं। इस मामले में इंसान को एक ही इख़्तियार (option) हासिल है, वह यह कि वह सब्र व बर्दाश्त से काम ले, ताकि वह दुनिया में नॉर्मल तरीक़े से रह सके।

शुक्र एक ऐसा जज़्बा है, जो सिर्फ़ एक ऐसे ज़ेहन में पैदा होता है, जो कामिल तौर पर मुस्बत (positive) हो, किसी भी क़िस्म की मनफ़ी फ़िक्र (negative thought) इसके ज़ेहन में मौजूद न हो। मुस्बत ज़ेहन का आदमी ही ख़ुदा की तौफ़ीक़ से आला शुक्र अदा करने के क़ाबिल होता है। सब्र दरअसल शुक्र की क़ीमत है। जो आदमी यह क़ीमत अदा न करे, वह शुक्र जैसी आला इबादत भी अंजाम नहीं दे सकता।

शुक्र की अहमियत

'ताग़ूत' का लफ़्ज़ी मतलब है— हद से आगे बढ़ने वाला। क़ुरआन में यह लफ़्ज़ शैतान के लिए आया है, क्योंकि उसने अल्लाह रब्बुल आलमीन से बग़ावत की। शैतान की सबसे बड़ी कोशिश यह है कि वह इंसान को शिकायती ज़ेहन में मुब्तला करके अल्लाह से दूर कर दे। शैतान ने आदम की तख़्लीक़ के वक़्त अल्लाह रब्बुल आलमीन को चैलेंज करते हुए कहा था—

وَلا تَجِدُ أَكثَرَهُم شاكِرينَ.

"तू अक्सर इंसानों को एतिराफ़ करने वाला न पाएगा।"

(7:17)

दीन का ख़ुलासा अल्लाह से ताल्लुक़ है। अल्लाह से ताल्लुक़ अगर इंसान को दरियाफ़्त के दर्जे में हासिल हुआ हो तो इंसान के अंदर

अपने आपमें यह वाक़या हो जाता है कि वह अपने पूरे दिलोजान के साथ इन इनामात के देने वाले (giver) का एतिराफ़ करे। इसके बरअक्स जहाँ अल्लाह का एतिराफ़ (शुक्र) न हो, यक़ीनी तौर पर वहाँ अल्लाह से हक़ीक़ी ताल्लुक़ भी न होगा। इंसान के अंदर अल्लाह के शुक्र का जज़्बा कैसे पैदा होता है? वह ग़ौर-ओ-फ़िक्र से पैदा होता है। असल यह है कि इस दुनिया में इंसान को अपने वजूद से लेकर 'लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम' (life support system) तक जो चीज़ें मिली हैं, वे पूरी तरह से अल्लाह का यकतरफ़ा अतिया हैं। इस दरियाफ़्त के बाद इंसान के अंदर अल्लाह के लिए एतिराफ़ का जज़्बा उभरता है। अल्लाह रब्बुल आलमीन के इसी एतिराफ़ का मज़हबी नाम 'शुक्र' है।

अल्लाह से ताल्लुक़ फ़िक़्ही या क़ानूनी हुक्म के तौर पर किसी के अंदर पैदा नहीं होता, बल्कि वह दरियाफ़्त के नतीजे के तौर पर पैदा होता है। अगर ऐसा हो कि बंदे के अंदर डिस्कवरी के दर्जे में अल्लाह से ताल्लुक़ पैदा हो तो उसके बाद अपने आप उसके नताइज ज़ाहिर होंगे, उसकी सोच में अल्लाह से गहरे ताल्लुक़ की झलक दिखाई देगी। अल्लाह से ताल्लुक़ का एक नमूना शुक्र है और जब इस क़िस्म का शुक्र किसी को हासिल हो जाए तो फ़ितरी तौर पर उसके अंदर ग़ौर-ओ-फ़िक्र का मिज़ाज पैदा होता है यानी वह हमेशा अल्लाह रब्बुल आलमीन के बारे में ग़ौर-ओ-फ़िक्र करता रहे। मारिफ़त इसी ग़ौर-ओ-फ़िक्र का नतीजा है। इसीलिए दीन में तदब्बुर या ग़ौर-ओ-फ़िक्र की अहमियत बहुत ज़्यादा है।

शुक्र : एक क़ुर्बानी का अमल

शुक्र सबसे बड़ी इबादत है। शुक्र जन्नत की क़ीमत है। शुक्र के बग़ैर ईमान नहीं। शुक्र के बग़ैर सच्ची ख़ुदा-परस्ती नहीं। शुक्र के बग़ैर

आदमी उन आला कैफ़ियात का तजुर्बा नहीं कर सकता, जिसे क़ुरआन में 'रब्बानियत' (आल-ए-इमरान, 3:79) कहा गया है। हक़ीक़त यह है कि दीनदारी की असल रूह शुक्र है। शुक्र के बग़ैर दीनदारी ऐसी ही है, जैसे फल का ऊपरी छिलका।

लेकिन शुक्र महज़ ज़बान से कुछ अल्फ़ाज़ अदा कर देने का नाम नहीं, शुक्र एक क़ुर्बानी का अमल है, बल्कि सबसे बड़ी क़ुर्बानी का अमल। जो आदमी सबसे बड़ी क़ुर्बानी देने के लिए तैयार हो, वही उस शुक्र का तजुर्बा कर सकता है, जो ख़ुदा को मतलूब है। असल यह है कि मौजूदा दुनिया में हर इंसान किसी-न-किसी एतिबार से एहसास-ए-महरूमी का शिकार होता है। हर इंसान के दिल में किसी-न-किसी के ख़िलाफ़ मनफ़ी जज़्बात मौजूद रहते हैं। हर इंसान मुख़्तलिफ़ अस्बाब से शिकायत और नफ़रत की नफ़्सियात में जीने लगता है। यही वह सूरत-ए-हाल है, जो शुक्र को किसी इंसान के लिए मुश्किल-तरीन काम बना देती है। आदमी ज़बान से शुक्र के अल्फ़ाज़ बोलता है, लेकिन उसका दिल हक़ीक़ी जज़्बात-ए-शुक्र से बिलकुल ख़ाली होता है।

ऐसी हालत में सिर्फ़ वही इंसान शुक्र का अमल कर सकता है, जिसका शुऊर इतना ज़्यादा बेदार हो चुका हो कि वह ना-शुक्री के अस्बाब के बावजूद शुक्र कर सके, जो मनफ़ी ख़यालात के जंगल में रहते हुए मुस्बत एहसास में जीने वाला बन जाए। वह अपने अंदर से ढूँढ-ढूँढकर ख़िलाफ़-ए-शुक्र चीज़ों को निकाले, वह अपने अंदर हक़ीक़ी जज़्बात-ए-शुक्र की तख़्लीक़ कर सके।

शुक्र एक इबादत है, जो हर हाल में मतलूब है। जो आदमी यह समझे कि शुक्र उस वक़्त करना है, जबकि उसे हर चीज़ इस तरह हासिल हो जाएगी, जैसा कि वह उन्हें हासिल करना चाहता था, मिली हुई चीज़ उसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ उसे मिल जाए। ऐसा आदमी कभी

शुक्र करने वाला नहीं बन सकता। ख़ुदा का हक़ीक़ी शुक्रगुज़ार वही है, जो शिकायत के बावजूद शुक्रगुज़ारी का राज़ दरियाफ़्त करे।

शुक्र से इज़ाफ़ा

क़ुरआन की सूरह इब्राहीम में इरशाद हुआ है—

وَإِذْ تَأَذَّنَ رَبُّكُمْ لَئِن شَكَرْتُمْ لَأَزِيدَنَّكُمْ
وَلَئِن كَفَرْتُمْ إِنَّ عَذَابِي لَشَدِيدٌ.

"और जब तुम्हारे रब ने तुम्हें आगाह कर दिया कि अगर तुम शुक्र करोगे, तो मैं तुमको ज़्यादा दूँगा और अगर तुम ना-शुक्री करोगे, तो मेरा अज़ाब सख़्त है।"

And also remember the time when your Lord declared: If you are grateful, I will surely bestow more favours on you; but if you are ungrateful, then know that My punishment is severe indeed. (14:7)

क़ुरआन की इस आयत में नेमत में इज़ाफ़ा से मुराद यह है कि दुनिया की ज़िंदगी में जो इंसान ख़ुदा की नेमतों का सच्चा शुक्र अदा करेगा, उसे आख़िरत में जन्नत की सूरत में हक़ीक़ी तौर पर ज़्यादा बड़ा इनाम दिया जाएगा। हक़ीक़त यह है कि इंसान को उसकी ज़ात के एतिबार से या बाहरी दुनिया के एतिबार से जो चीज़ें मिली हैं, उनमें से हर चीज़ उसके लिए 'नेमत' (great blessing) है। इंसान से यह मतलूब है कि वह चीज़ों को 'फॉर ग्रांटेड' (for granted) न ले, बल्कि वह उन्हें शुऊरी तौर पर दरियाफ़्त करे। वह इन नेमतों के लिए कामिल मानों में ख़ालिक़ का एतिराफ़ करे।

शुक्र दरअसल एतिराफ़ का दूसरा नाम है। नेमत के मिलने पर देने वाले का एतिराफ़ सबसे बड़ी इबादत है और यही इबादत वह चीज़ है, जो किसी इंसान को जन्नत का मुस्तहिक़ बनाएगी। नेमत का एहसास किस तरह होता है। इंसान के अंदर ख़ालिक़ ने एक 'फैकल्टी' (faculty) रखी है, इसे 'एहसास-ए-लज़्ज़त' (sense of enjoyment) कहते हैं।

कायनात में इंसान वाहिद मख़्लूक़ है, जो लज़्ज़त का एहसास रखता है। मौजूदा दुनिया में इंसान को वक़्ती तौर पर इसीलिए रखा गया है कि वह लज़्ज़तों को महसूस करके ख़ुदा का शुक्र अदा करे। जो इंसान इस दुनिया में हक़ीक़ी शुक्र का सबूत देगा, वह अगली दुनिया में अबदी जन्नत में बसाया जाएगा, जहाँ वह अपने एहसास-ए-लज़्ज़त की कामिल तस्कीन पा सके। मौजूदा दुनिया इंसान के लिए वक़्ती शुक्र का मक़ाम है। यही वक़्ती शुक्र वह क़ीमत है, जो किसी इंसान को अबदी जन्नत में दाख़िले का मुस्तहिक़ बनाती है।

सब्र व शुक्र

अक्टूबर, 1988 में मेरा काबुल के लिए एक सफ़र हुआ। मैं निज़ामुद्दीन वेस्ट ,नई दिल्ली अपने ऑफ़िस से एयरपोर्ट के लिए रवाना हुआ, तो सड़क के दोनों तरफ़ सरसब्ज़ दरख़्तों की क़तारें मुसलसल चली जा रही थीं। उसे देखकर मुझे शारजाह का एक सहराई मंज़र याद आया। 1984 के शारजाह के सफ़र में क़ाज़ी-ए-शारजाह अल-शेख़ अली अल-महवेती मुझे अपने रिहायशी मकान पर ले गए थे, जो शहर से तक़रीबन 25 किलोमीटर के फ़ासले पर वाक़ेअ था। यह सफ़र पूरा-का-पूरा सहरा के रेतीले मैदान में तय हुआ था। दिल्ली का सफ़र सरसब्ज़ माहौल में था, तो शारजाह का यह सफ़र सहराई माहौल में। इस दुनिया में 'दरख़्त' इसलिए हैं कि आदमी उन्हें देखकर शुक्र करे और 'सहरा'

इसलिए हैं कि आदमी उन्हें देखकर सब्र करना सीखे। आदमी दोनों क़िस्म की चीज़ों को देखता है, मगर वह उनसे न शुक्र का सबक़ लेता है और न सब्र का।

मोमिन इंसान का मामला इसके बरअक्स होता है। सहाबी-ए-रसूल सुहैब रूमी (वफ़ात : 38 हिजरी) की एक रिवायत के मुताबिक़, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि मोमिन का मामला बड़ा अजीब है। इसका हर मामला उसके लिए ख़ैर है और ऐसा मोमिन के सिवा किसी और के लिए नहीं। अगर उसे आराम मिलता है, तो वह अल्लाह की हम्द करता है और शुक्र करता है। पस वह उसके लिए ख़ैर बन जाता है और अगर उस पर मुसीबत आती है, तो वह अल्लाह की हम्द करता है और सब्र करता है। पस वह उसके लिए ख़ैर बन जाता है।

عَنْ صُهَيْبٍ، قَالَ:قَالَ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ:عَجَبًا لِأَمْرِ الْمُؤْمِنِ، إِنَّ أَمْرَهُ كُلَّهُ خَيْرٌ، وَلَيْسَ ذَاكَ لِأَحَدٍ إِلَّا لِلْمُؤْمِنِ، إِنْ أَصَابَتْهُ سَرَّاءُ (وفى رواية لاحمد: حَمِدَ رَبَّهُ وَ) شَكَرَ، فَكَانَ خَيْرًا لَهُ، وَإِنْ أَصَابَتْهُ ضَرَّاءُ، (وفى رواية لاحمد: وَإِنِ أَصَابَتْهُ مُصِيبَةٌ حَمِدَ رَبَّهُ وَ) صَبَرَ فَكَانَ خَيْرًا لَهُ .

‘The affair of the believer is truly strange. Every situation proves good for him and this is special to a believer alone. If he finds himself in a pleasant situation, he is thankful to God, and that is good for him. If he is faced with unpleasant situation he keeps patience and again that is good for him.’

(सही मुस्लिम, हदीस नंबर 2999; मुस्नद अहमद, हदीस नंबर 1487)

अल्लाह की हम्द वही कर सकता है, जो मनफ़ी नफ़्सियात से ख़ाली हो। मोमिन के साथ दोतरफ़ा ख़ैर का यह मामला किसी पुर-असरार सबब से नहीं होता, वह मुकम्मल तौर पर एक मालूम सबब के तहत पेश आता है। असल यह है कि मोमिन उस इंसान का नाम है, जिसे दरियाफ़्त की सतह तक ख़ुदा की मारिफ़त हासिल हुई हो। ऐसे इंसान के अंदर एक ज़ेहनी इंक़िलाब आ जाता है। वह शुऊरी तौर पर बेदार हो जाता है। वह इस क़ाबिल हो जाता है कि मामलात और तजुर्बात को हक़ीक़त की नज़र से देखे। वह वक़्ती जज़्बात से बुलंद होकर मामले की गहराई को समझ सके।

मोमिन अपनी इस हक़ीक़त-शनासी की बिना पर इस क़ाबिल हो जाता है कि वह जिस तजुर्बे से भी गुज़रे, वह उसे मुस्बत नतीजे में तब्दील कर सके। वह हर वाक़ये में ख़ुदा की निशानी को देखे। वह ज़ाती तजुर्बे को ख़ुदा के तख़्लीक़ी नक़्शे में रखकर देख सके। मोमिन की यही वे सिफ़ात हैं, जो उसके अंदर बा-माना सलाहियत पैदा कर देती हैं कि उसे जब ख़ुशी और राहत का तजुर्बा हो, तो वह सरकश न बन जाए। वह उसे ख़ुदा का अतिया समझकर ख़ुदा की ख़ुदाई का एतिराफ़ करे। इसी एतिराफ़-ए-ख़ुदावंदी का नाम शुक्र है। शुक्र बिला शुब्हा एक अज़ीम इबादत है।

ताहम दुनिया की ज़िंदगी में आदमी को हमेशा ख़ुशगवार तजुर्बे नहीं होते। बार-बार ऐसा होता है कि आदमी को ना-ख़ुशगवार तजुर्बात से गुज़रना पड़ता है। उस वक़्त मोमिन की शुऊरी बेदारी उसे इससे बचा लेती है कि वह उस पर शिकायत या फ़रियाद करने लगे। वह ना-ख़ुशगवार तजुर्बे को ख़ुदा के तख़्लीक़ी नक़्शे के मुताबिक़ समझता है। वह ना-ख़ुशगवार तजुर्बे को एक फ़ितरी अमल समझकर इससे यह यक़ीन हासिल करता है कि यह एक वक़्ती चीज़ है। हालात यक़ीनन बदलेंगे और वह जल्द ही मुझे ज़्यादा बेहतर ज़िंदगी अता

करेंगे, ख़्वाह आज की दुनिया में या आज के बाद बनने वाली दूसरी अबदी दुनिया में।

हक़ीक़त यह है कि सब्र भी शुक्र ही की एक सूरत है। ना-ख़ुशगवार सूरत-ए-हाल को रज़ामंदी के साथ क़ुबूल करना और उसे ख़ुदा की तरफ़ से आया हुआ मानकर मुस्बत ज़ेहन के तहत उसका इस्तिक़बाल करना यही सब्र है और यह सब्र हमेशा शुक्रगुज़ार दिल से ज़ाहिर होता है। ना-शुक्री से भरा हुआ दिल कभी सब्र का सबूत नहीं दे सकता।

शुक्र की तर्बियत

शुक्र का मिज़ाज कैसे पैदा होता है, इसे एक वाक़ये से समझा जा सकता है। एक साहिब से मुलाक़ात हुई। गुफ़्तगू के दौरान उन्होंने कहा कि हमारे यहाँ इस्लामी ज़ेहन बनाने के लिए बेशुमार सरगर्मियाँ जारी हैं, मगर 50 साला कोशिशों के बावजूद अब तक इस्लामी अंदाज़ में लोगों की ज़ेहनी तर्बियत न हो सकी। मैंने कहा कि मुझे आपके बयान के दूसरे हिस्से से इत्तिफ़ाक़ है, मगर मुझे उसके पहले हिस्से से इत्तिफ़ाक़ नहीं। सिर्फ़ इस्लाम का नाम लेने से इस्लामी तर्बियत नहीं होती। असल यह है कि इस्लामी ज़ेहन बनाने के लिए सही रुख़ में कोशिश नहीं की गई। जब सिम्त दुरुस्त न हो तो मतलूब नतीजा कैसे निकल सकता है? इस्लामी मिज़ाज बनाने की इब्तिदा ख़ुदा की मारिफ़त और ख़ुदा के शुक्र का मिज़ाज पैदा करने से होती है।

यह मिज़ाज कैसे पैदा होता है? इसे एक मिसाल से समझा जा सकता है। पाकिस्तान से शाए होने वाले पंद्रह रोज़ा 'अल-मिंबर' के शुमारा 25 सितंबर, 1991 में 'ज़िया-उल-हक़ शहीद फ़ाउंडेशन' के

ज़ेर-ए-एहतिमाम होने वाली कॉन्फ्रेंस का तफ़्सीली तज़्किरा किया गया था। इसमें यह भी कहा गया था— "ज़िया-उल-हक़ फाउंडेशन को फ़ौरी तौर पर क़ौम के किरदार और फ़िक्र की तहज़ीब-ओ-तर्बियत का काम शुरू करना चाहिए।"

मगर महज़ इस तरह इस्लाम का नाम लेने से ख़ुदा की मारिफ़त और इस्लामी किरदार पैदा नहीं हो सकता। इसके लिए ज़रूरत होती है कि लोगों को कायनाती निशानियों का इस तरह मुताला कराया जाए कि उनके चारों तरफ़ की पूरी दुनिया उनके लिए रिज़्क़-ए-रब्बानी का दस्तरख़्वान बन जाए, ताकि इंसान ख़ुदा की रहमत के ज़रिये ख़ुदा की मारिफ़त हासिल करे और ख़ुदा का शुक्रगुज़ार बने, मगर मज़्कूरा मैगज़ीन में साबिक़ सदर जनरल ज़िया-उल-हक़ साहब के तज़्किरे के तहत दर्ज है कि ''ये शहीद सदर ही थे, जिनकी बदौलत (सोवियत यूनियन टूटने के बाद) क़ुरआन मजीद के लाखों नुस्ख़े रूस में तक़्सीम होते रहे (सफ़्हा 22)।" 'अल-मिंबर' में दावती अमल के वाक़ये को तमामतर एक इंसान की बदौलत ज़हूर में आने वाला वाक़या बताया गया है।

इसी वाक़ये का ज़िक्र 'अल-रिसाला' (नवंबर, 1990; सफ़्हा 27) में भी किया गया। सोवियत सिस्टम का तज्ज़िया करते हुए मैंने लिखा कि अल्लाह तआला ने अपनी आला तदबीरों के ज़रिये हालात में वह तब्दीली पैदा की, जिसके नतीजे में सोवियत यूनियन की मज़बूत दीवारें टूट गईं और वहाँ इस्लाम का दाख़िला मुमकिन हो गया।

कोई वाक़या पेश आए तो इसे देखने के दो तरीक़े हैं। इस वाक़ये को अकाबिर-ए-क़ौम या क़ौमी हीरो के ख़ाने में डालकर देखना। इसके बरअक्स दूसरा तरीक़ा है इस वाक़ये को ख़ुदा के ख़ाने में डालकर देखना। 'अल-रिसाला' के मज़मून को पढ़कर आदमी के अंदर शुक्र-

ए-ख़ुदावंदी का जज़्बा उमड़ेगा। मज़ीद उसके अंदर जज़्बा उभरेगा कि मौजूदा ज़माने में इस्लामी दावत के नए इम्कानात पैदा हुए हैं, हमें चाहिए कि हम उन्हें इस्तेमाल करें, जबकि 'अल-मिंबर' के बयान से सिर्फ़ 'हीरो वर्शिप' का जज़्बा उभरेगा, उसके सिवा और कुछ नहीं। इससे आप अंदाज़ा कर सकते हैं कि इस्लामी तर्बियत के लिए मुसलमानों का मौजूदा तरीक़ा किस तरह ना-काफ़ी है।

दिसंबर, 1987 में मालदीव के लिए मेरा एक सफ़र हुआ। यह सफ़र एक इंटरनेशनल इस्लामिक कॉन्फ्रेंस में शिरकत के लिए था, जिसका एहतिमाम हुकूमत-ए- मालदीव के तआवुन से किया गया था। 5 दिसंबर, 1987 की सुबह को फ़ज्र से पहले घर से रवाना होना था। 4 दिसंबर की शाम को मुख़्तलिफ़ कामों में देर हो गई और मैं साढ़े बारह बजे से पहले बिस्तर पर न जा सका। सोते वक़्त दिल से दुआ निकली कि ख़ुदाया, मुझे तीन बजे जगा दीजिए। ज़्यादा काम की वजह से नींद भी किसी क़द्र देर में आई और मैं सौ गया। मैं बिलकुल गहरी नींद में सो रहा था कि ख़िलाफ़-ए-मामूल अचानक नींद खुल गई। देखा तो घड़ी की एक सुई तीन पर थी और दूसरी सुई बारह पर। मैंने अल्लाह तआला का शुक्र अदा किया। दिल ने कहा कि अल्लाह की मदद ठीक अपने वक़्त पर आती है, अगरचे इंसान अपनी बेसब्री की वजह से घबरा उठता है और समझता है कि शायद ख़ुदा की मदद आने वाली नहीं।

इंसान और निज़ाम-ए-रबूबियत

इंसान एक मुकम्मल वजूद है, मगर इसी के साथ वह मुकम्मल तौर पर बाहरी सहारे का मोहताज वजूद है यानी इंसान को अपने वजूद की तकमील के लिए हर लम्हा एक मददगार निज़ाम दरकार है। इस निज़ाम

के बग़ैर वह अपने वजूद को बाक़ी नहीं रख सकता। इस हक़ीक़त को क़ुरआन में इन अल्फ़ाज़ में बयान किया गया है—

يا أَيُّها النّاسُ أَنتُمُ الفُقَراءُ إِلَى اللَّهِ.

"ऐ लोगो, तुम अल्लाह के मोहताज हो।" (35:15)

इस मददगार निज़ाम का नाम निज़ाम-ए-रबूबियत है यानी रब्बुल आलमीन का क़ायम-कर्दा निज़ाम। मसलन इंसान के अंदर हाज़मे का निज़ाम (digestive system) है, मगर खाने-पीने की चीज़ों की सप्लाई बाहर से होती है। इंसान के अंदर साँस लेने का निज़ाम (respiratory system) है, मगर ऑक्सीजन उसे ख़ुदा के कारख़ाने से मिलती है। इंसान के पास देखने की ताक़त तो है, मगर वह रोशनी ख़ुदा की तरफ़ से आती है जिसके बग़ैर वह देख नहीं सकता। इंसान के पास सुनने की ताक़त है, मगर इस हवा को चलाने वाला ख़ुदा है जिसके ज़रिये इंसान के कानों तक आवाज़ पहुँचती है वग़ैरह-वग़ैरह। इंसानी वजूद के अंदर इस क़िस्म के बहुत-से निज़ाम हैं, मगर हर निज़ाम अपनी कारकर्दगी के लिए बाहरी मदद का मोहताज है। ये मुख़्तलिफ़ क़िस्म के बाहरी निज़ाम, जिन पर इंसानी ज़िंदगी का दारोमदार है, उनके मज्मूए को 'लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम' कहा जाता है। अगर यह सिस्टम मौजूद न हो तो इंसान का पूरा वजूद बे-मानी हो जाएगा।

मछली पानी के बाहर मुसलसल तड़पती रहती है। ऐसा इसलिए होता है कि उसे ज़िंदा रहने के लिए ऑक्सीजन की ज़रूरत है और मछली सिर्फ़ पानी से ऑक्सीजन ले सकती है। मछली की यह मिसाल हर आदमी के लिए बहुत ज़्यादा सबक़-आमोज़ है। हर वक़्त इंसान को सोचना चाहिए कि ख़ुदा अगर 'लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम' या दूसरे अल्फ़ाज़ में अपने निज़ाम-ए-रबूबियत को वापस ले-ले तो मेरा क्या हाल होगा। क़ुरआन में है—

"बताओ, अगर अल्लाह क़यामत के दिन तक तुम पर हमेशा के लिए रात कर दे तो अल्लाह के सिवा कौन माबूद है, जो तुम्हारे लिए रोशनी ले आए, तो क्या तुम लोग सुनते नहीं?" (28:71)

यह सोच अगर आदमी के अंदर हक़ीक़ी तौर पर पैदा हो जाएगी, तो यही एक बात उसके अंदर तमाम आला इंसानी क़द्रों (human values) को पैदा करने का ज़रिया बन जाएगी। मसलन तवाज़ो (modesty), शुक्र, माफ़ी और दरगुज़र, ख़ैर-ख़्वाही, इंसाफ़ वग़ैरह।

सब कुछ ख़ुदा का अतिया

1938 में अरब में पेट्रोलियम की दरियाफ़्त हुई। उसके बाद अरबों की ज़िंदगी का नक़्शा बदल गया। एक अरब देहाती का वाक़या है कि वह पहले मामूली ख़ैमे में रहता था। उसकी ज़िंदगी का दारोमदार तमामतर ऊँट के ऊपर था, फिर अचानक उसके पास पेट्रोल की दौलत आ गई। उसके एक दोस्त ने उसके लिए स्विट्ज़रलैंड में जदीद तर्ज़ का एक शानदार मकान ख़रीदा। अरब देहाती हवाई जहाज़ से सफ़र करके वहाँ पहुँचा और अपने ख़ूबसूरत मकान को देखा, तो उसे यक़ीन नहीं आता था कि यह उसी का मकान है। उसे ऐसा महसूस हुआ, जैसे कि वह कोई ख़्वाब देख रहा है।

वह अपने मकान की दीवार और उसके फ़र्नीचर को हाथ से छूकर देखता था कि वह सचमुच अपने मकान में है या वह ख़्वाब में कोई तसव्वुराती महल देख रहा है। बहुत देर के बाद जब उसे यक़ीन हुआ कि यह एक हक़ीक़ी मकान है और वह उसी का अपना मकान है, तो वो ख़ुशी के आँसुओं के साथ सज्दे में गिर पड़ा और देर तक इसी हालत में रहा।

यह कैफ़ियत जो एक अरब देहाती के ऊपर गुज़री, यही कैफ़ियत हर इंसान के ऊपर बहुत ज़्यादा बड़े पैमाने पर गुज़रनी चाहिए। इसलिए कि मौजूदा दुनिया की सूरत में हर इंसान को वही चीज़ मिली हुई है, जो अरब देहाती को स्विट्ज़रलैंड के मकान की सूरत में मिली।

स्विट्ज़रलैंड का मकान अरब देहाती के लिए जितना अजीब था, उससे बेशुमार गुना ज़्यादा अजीब मौजूदा कायनात है, जो कोई क़ीमत अदा किए बग़ैर हर इंसान को हर लम्हा मिली हुई है। हर इंसान का केस मज़ीद इज़ाफ़े के साथ वही है, जो मज़्कूरा अरब देहाती का केस था। हक़ीक़त यह है कि हर इंसान कामिल तौर पर आजिज़ और महरूम इंसान है। इस फ़ितरी हक़ीक़त को क़ुरआन में इस तरह बयान किया गया है—

"ऐ लोगो, तुम सब अल्लाह के मोहताज हो।" (35:15)

फिर उसे मौजूदा दुनिया की सूरत में सब कुछ दे दिया जाता है। फ़ितरत अपने तमाम ख़ज़ानों के साथ ता-हयात उसकी ख़िदमतगुज़ार बन जाती है।

इंसान का पैदा होना एक हैरतनाक अजूबा है। इंसान अगर अपने बारे में सोचे, तो वह एक-एक चीज़ पर दहशत-ज़दा होकर रह जाएगा। एक ऐसा इंसान जो ज़िंदगी रखता है, जिसके अंदर देखने और सुनने की सलाहियत है, जो सोचता है और चलता है, जो मंसूबा बनाता है और उसे अपने इरादे के मुताबिक़ अमल में लाता है। ये सब इतनी ज़्यादा अनोखी सिफ़ात हैं, जो इंसान को अपने आप बिना किसी क़ीमत के मिली हुई हैं। इंसान अगर इस पर सोचे तो वह शुक्र के एहसास में डूब जाए।

फिर यह दुनिया जिसके अंदर इंसान रहता है, वह हैरतनाक हद तक एक इंसान के मुवाफ़िक़ दुनिया है। ज़मीन जैसा ग्रह (Planet) सारी

वसीअ कायनात में कोई दूसरा नहीं। यहाँ पानी है, यहाँ सब्ज़ा है, यहाँ हवा है, यहाँ धूप है, यहाँ खाने का सामान है और दूसरी अनगिनत चीज़ें ख़ालिक़ के यकतरफ़ा अतिया के तौर पर मौजूद हैं। ये चीज़ें ज़मीन के सिवा कहीं और मौजूद नहीं।

अगर आदमी इस हक़ीक़त को सोचे तो वह मज़्कूरा अरब देहाती की तरह, शुक्र के एहसास से, सज्दे में गिर पड़े, मगर ऐसा नहीं होता। इसका सबब यह है कि इंसान दुनिया की चीज़ों को 'फॉर ग्रांटेड' (for granted) तौर पर लिये रहता है। वह शुऊरी या ग़ैर-शुऊरी तौर पर यह समझता है कि जो कुछ है, इसे होना ही चाहिए। जो कुछ उसे मिला हुआ है, वह उसे मिलना ही चाहिए। यही वह मक़ाम है, जहाँ इंसान का इम्तिहान है।

इंसान को चाहिए कि वह इस मामले में अपने शुऊर को ज़िंदा करे। वह बार-बार सोचकर इस हक़ीक़त को समझे कि वह सर-ता-पा एक आजिज़ मख़्लूक़ है। उसे जो कुछ मिला हुआ है, वह मुकम्मल तौर पर ख़ुदा के देने से मिला है। ख़ुदा अगर न दे तो उसे कुछ भी मिलने वाला नहीं। जो चीज़ें इंसान को बज़ाहिर अपने आप मिल रही हैं, इन्हें वह इस तरह ले, जैसे कि वह हर वक़्त बराहे-रास्त ख़ुदा की तरफ़ से भेजी जा रही हैं। वह मिली हुई चीज़ों को दी हुई चीज़ों के तौर पर दरियाफ़्त करे।

ख़ुदा का मतलूब इंसान वह है, जो अपने ज़ेहन को इतना ज़्यादा बेदार करे कि वह बज़ाहिर अस्बाब के तहत मिलने वाले सामान-ए-हयात को बग़ैर किसी ज़रिये के ख़ुदा की तरफ़ से मिला हुआ समझे। वह मामूली को ग़ैर-मामूली तौर पर देख सके। वह ग़ैब को इस तरह दरियाफ़्त करे गोया वह उसे देख रहा है। यही वे लोग हैं, जिन्हें आख़िरत में ख़ुदा का दीदार नसीब होगा और यही वे लोग हैं, जो ख़ुदा के पड़ोस में बनाई जाने वाली अबदी जन्नत में जगह पाएँगे।

शुक्र के दो दर्जे

इस दुनिया में इंसान को अपने वजूद से लेकर 'लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम' तक जो चीज़ें मिली हैं, वे सब-की-सब अल्लाह का अतिया हैं। इंसान के लिए ज़रूरी है कि वह पूरे दिलोजान के साथ उनके देने वाले (giver) का एतिराफ़ करे। इस एतिराफ़ का मज़हबी नाम शुक्र है। इसके दो दर्जे हैं। एक, 'नॉर्मल शुक्र' या 'नॉर्मल एतिराफ़' और दूसरा, 'तख़्लीक़ी शुक्र' या 'तख़्लीक़ी एतिराफ़' (creative acknowledgement)। नॉर्मल शुक्र की मिसाल यह है कि आपको प्यास लगी। आपने ग्लास में पानी लेकर उसे पिया। इससे आपकी प्यास बुझ गई और फिर आपने कहा कि ख़ुदाया, तेरा शुक्र है कि तूने मुझे पानी दिया, जिससे मैं अपनी प्यास बुझाऊँ।

तख़्लीक़ी शुक्र की मिसाल यह है कि आपने जब पानी पिया तो आपको पानी की वह पूरी तारीख़ याद आ गई, जो जदीद साइंस ने दरियाफ़्त की है। तक़रीबन 15 बिलीयन साल पहले वसीअ ख़ला (space) में बेशुमार सितारे वजूद में आए। फिर एक अर्से के बाद 'लिटिल बैंग' (little bang) हुआ, जिससे मौजूदा निज़ाम-ए-शम्सी (solar system) वजूद में आया। इसके बाद ज़मीन की सतह पर बहुत बड़ी मिक़दार में हाइड्रोजन और ऑक्सीजन गैस के बादल छा गए, फिर दो गैसों के मिलने से वह इस्तिसनाई चीज़ वजूद में आई, जिसे 'पानी' कहा जाता है। फिर यह पानी समंदरों में खारे पानी की हैसियत से जमा हो गया, फिर बारिश के निज़ाम के तहत इस खारे पानी का डी-सैलिनेशन हुआ। इस तरह हमें वह मीठा पानी हासिल हुआ, जिससे हम अपनी प्यास बुझाएँ और दूसरे काम करें। मसलन खेती वग़ैरह।

पानी के मामले में पहली सूरत 'नॉर्मल शुक्र' की है और दूसरी

सूरत 'तख़्लीक़ी शुक्र' की। दूसरे अल्फ़ाज़ में, पहला शुक्र अगर सिर्फ़ शुक्र है, तो दूसरा शुक्र बरतर शुक्र। शुक्र और बरतर शुक्र का यही मामला दूसरी तमाम चीज़ों के बारे में पेश आता है।

इसी तरह इस मामले की एक मिसाल ख़ून (blood) है। इंसान जो ग़िज़ा अपने जिस्म में दाख़िल करता है, वह एक पेचीदा निज़ाम के तहत ख़ून में तब्दील होती है, फिर यह ख़ून एक और पेचीदा निज़ाम के तहत सारे जिस्म में रगों के ज़रिये मुसलसल दौड़ता है। यह बिला शुब्हा रबूबियत के निज़ाम की एक आला मिसाल है। ख़ून का बनना, ख़ून का मुसलसल गर्दिश करना और ख़ून की सफ़ाई का इंतिज़ाम वग़ैरह। ये सब चीज़ें इंसान को ख़ुदा की नेमतों की याद दिलाती हैं और वह अल्लाह के लिए सरापा शुक्र में ढल जाता है।

क़दीम ज़माने में ख़ून का तसव्वुर सिर्फ़ यह था कि वह एक सुर्ख़ लिक्विड है, जो जिस्म की ताक़त के लिए जिस्म के अंदर गर्दिश करता रहता है। फिर यह दरियाफ़्त हुई कि ख़ून दो क़िस्म के ज़र्रात से मिलकर बनता है— सुर्ख़ ज़र्रात (red blood corpuscles) और सफ़ेद ज़र्रात (white blood corpuscles)। अब यह दरियाफ़्त हुई है कि ख़ून में इसके सिवा एक और ज़र्रा होता है। इसे 'प्लेटलेट्स' (platelets) का नाम दिया गया है। यह तीसरा ज़र्रा इंसान की ज़िंदगी और सेहत के लिए बेहद अहम है। हक़ीक़त यह है कि ख़ून हर एतिबार से अल्लाह तआला की एक अज़ीम नेमत है। इस नेमत का एहसास आदमी के अंदर शुक्र व हम्द के चश्मे जारी कर देता है।

इस क़िस्म के बेशुमार इंतिज़ामात हैं, जिनके ऊपर इंसान की ज़िंदगी क़ायम है। यह निज़ाम सीधे तौर पर ख़ुदा की क़ुदरत के तहत क़ायम है और इसी को क़ुरआन में 'रबूबियत' कहा गया है। यह निज़ाम-ए-रबूबियत तमाम-तर अल्लाह की जानिब से क़ायम है।

इंसान से यह मतलूब है कि वह रबूबियत के इस निज़ाम से वाक़फ़ियत हासिल करे और पूरे मानों में अल्लाह का शुक्रगुज़ार बंदा बनकर इस दुनिया में रहे।

क़ुरआन में बताया गया है कि रब सिर्फ़ अल्लाह है और उसी की रबूबियत इस दुनिया में क़ायम है (6:164)। इसी तरह फ़रमाया कि हुक्म सिर्फ़ अल्लाह का है और तमाम चीज़ें उसी के ज़ेर-ए-हुक्म हैं (12:40)। ये दोनों अल्फ़ाज़ रब और हुक्म अल्लाह की ज़ात की निस्बत से क़ुरआन में आए हैं, इसका कुछ भी ताल्लुक़ सियासत या इकोनॉमिक्स से नहीं है, मगर मौजूदा ज़माने में कुछ लोगों ने यह किया कि इन्होंने मज़्कूरा अल्फ़ाज़ क़ुरआन से लिये और इसके अंदर अपने ख़ुदसाख़्ता मफ़्हूम को शामिल कर दिया। यह गोया 'रब' और 'हुक्म' के लफ़्ज़ को सियासी बनाना (politicisation) था। क़ुरआनी अल्फ़ाज़ में इस क़िस्म का ख़ुदसाख़्ता मफ़्हूम शामिल करके इन्होंने यह ऐलान किया कि मुसलमान का यह मिशन है कि वह दुनिया में निज़ाम-ए-रबूबियत या ख़ुदाई हुकूमत क़ायम करे। यह बिला शुब्हा एक ग़ैर-इल्मी बात है। इसकी ग़लती इतनी ज़्यादा वाज़ेह है कि वह यक़ीनी तौर पर क़ाबिल-ए-रद्द है।

जज़्बात-ए-शुक्र की बेदारी

हज़रत अब्दुल्लह बिन उमर से रिवायत है, वे कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने रोज़ा रखकर शाम को पानी से इफ़्तार किया तो आपकी ज़बान से ये अल्फ़ाज़ निकले—

ذَهَبَ الظَّمَأُ وَابْتَلَّتِ الْعُرُوقُ وَثَبَتَ الأَجْرُ إِنْ شَاءَ.

"प्यास चली गई और रगें तर हो गईं और रोज़े का अज्र इंशाल्लाह साबित हो गया।"

(सुनन अबू दाऊद, हदीस नंबर 2357)

पानी एक ग़ैर-मामूली क़िस्म की नेमत है। पानी पर इंसानी ज़िंदगी का दारोमदार है। पानी नहीं तो ज़िंदगी नहीं, मगर आम हालात में पानी की इस ख़ुसूसी नेमत का एहसास नहीं होता। एक आदमी जब रोज़ा रखकर सारा दिन पानी का इस्तेमाल न करे और उस पर प्यास का तजुर्बा गुज़रे, उस वक़्त जब आदमी पानी पीता है तो उसे महसूस होता है कि पानी कैसी अजीब नेमत है।

उस वक़्त आदमी के तमाम एहसासात जाग उठते हैं। वह सोचता है कि किस तरह दो गैसों के मिलने से लिक्विड पानी बन गया। अथाह मिक़दार में पानी के ज़ख़ीरे ज़मीन के ऊपर जमा हो गए, फिर पानी से ज़िंदगी की तमाम ज़रूरतें पूरी हो गईं। उन्हीं में से एक यह है कि पानी आदमी की प्यास को बुझाकर उसके लिए ज़िंदगी का सबब बनता है। ये एहसासात जब जागते हैं, तो न सिर्फ़ यह होता है कि आदमी की प्यास बुझती है, बल्कि इसी के साथ शुक्र-ए-ख़ुदावंदी का एक दरिया आदमी के अंदर रवा हो जाता है।

अल्लाह ही इंसान का हक़ीक़ी मददगार है। अल्लाह ने इंसानों को अनगिनत नेमतें अता की हैं। इन नेमतों पर अल्लाह का हक़ीक़ी शुक्र अदा करना अल्लाह की सबसे बड़ी इबादत है। रोज़े के ज़रिये जब इंसान के अंदर इन नेमतों का एहसास जगाया जाता है, तो आदमी का शुऊर बेदार हो जाता है। वह ग़फ़लत से बाहर आ जाता है। वह एहसास-ए-नेअमत से सरशार होकर हक़ीक़ी मानों में अल्लाह का शुक्रगुज़ार बंदा बन जाता है। रोज़ा जज़्बात-ए-शुक्र की बेदारी का ज़रिया है। इंसान

हर वक़्त इनामात-ए-ख़ुदावंदी के समंदर में रहता है, मगर आम हालात में उसे इन नेमतों का शुऊरी एहसास नहीं होता। रोज़ा आदमी को इस क़ाबिल बनाता है कि वह इन नेमतों को फिर से दरियाफ़्त करके अपने रब की आला मारिफ़त हासिल करे।

शुक्र का एहसास

अगर आप लज़ीज़ खाना खाएँ और उसे खाकर 'लिप सर्विस' के तौर पर 'अल्हम्दुलिल्लाह' कहें तो यह हैवानी दर्जे का शुक्र है, क्योंकि यह मुशाहदे (observation) और ज़ायक़े पर मबनी है और मुशाहदे व ज़ायक़े के दर्जे का शुक्र सिर्फ़ हैवानी दर्जे का शुक्र है, वह आला इंसानी दर्जे का शुक्र नहीं।

आला दर्जे का शुक्र यह है कि जब खाना आपके सामने आए तो उसे देखकर ख़ुदा का पूरा तख़्लीक़ी निज़ाम आपको याद आ जाए। आप सोचें कि ये तमाम ग़िज़ाई चीज़ें पहले ग़ैर-ग़िज़ाई चीज़ें थीं। ख़ुदा ने एक अमल (process) के ज़रिये एक अज़ीम वाक़या बरपा किया। वह था ग़ैर-ग़िज़ा (non-food) को ग़िज़ा (food) में तब्दील करना। इस तरह एक कायनाती अमल के ज़रिये ये तमाम ग़िज़ाई चीज़ें वजूद में आईं।

फिर आप यह सोचें कि ये ग़िज़ाई चीज़ें अपनी इब्तिदाई सूरत में मेरे लिए ऊर्जा (energy) का ज़रिया नहीं हो सकती थीं। चुनाँचे ख़ुदा ने मज़ीद यह किया कि इसने मेरे जिस्म के अंदर एक पेचीदा क़िस्म का हाज़मे का निज़ाम रख दिया। यह निज़ाम एक ऑटोमेटिक निज़ाम है। जब मैं कोई चीज़ खाता हूँ तो यह निज़ाम इन ग़िज़ाई चीज़ों को हैरतअंगेज़ तौर पर ज़िंदा ख़लयात (living cells) में तब्दील कर देता है। फिर ये ज़िंदा ख़लयात मेरे जिस्म में गोश्त और ख़ून जैसी चीज़ों में ढल जाते

हैं। यह सोचकर आपके अंदर शुक्र का गहरा एहसास पैदा होगा, जिसे अल्फ़ाज़ में ज़ाहिर करने के लिए आप ख़ुद को आजिज़ पाएँगे।

इस मिसाल से यह अंदाज़ा होता है कि इंसानी शुक्र क्या है और हैवानी शुक्र क्या। अगर आपके अंदर सिर्फ़ हैवानी दर्जे का शुक्र है, तो आप हमेशा ना-शुक्री के एहसास में जिएँगे। शुक्र के आला एहसास में जीने के लिए इंसानी दर्जे का जज़्बा-ए-शुक्र दरकार है, मगर यही वह चीज़ है, जो दुनिया में सबसे ज़्यादा कम पाई जाती है— وَقَلِيلٌ مِن عِبَادِيَ الشَّكُورُ (34:13)। इंसान से अल्लाह तआला को जो शुक्र मतलूब है, वह इंसानी दर्जे का शुक्र है। सिर्फ़ हैवानी दर्जे का शुक्र इंसान जैसी मख़्लूक़ से क़ाबिल-ए-क़बूल नहीं हो सकता।

आला शुक्र

शैतानी बहकावे का असल निशाना यह है कि वह इंसान को शुक्र के रास्ते से हटा दे (अल-आराफ़, 7:17)। हिदायत और गुमराही दोनों का असल ख़ुलासा यही है। हिदायत यह है कि आदमी शुक्र के एहसास में जीने वाला हो। इसके मुक़ाबले में गुमराही यह है कि आदमी का दिल शुक्र के जज़्बात से ख़ाली हो जाए। शैतान यही काम हमेशा करता रहा है, लेकिन बाद के ज़माने में शैतान के लिए यह मुमकिन हो जाएगा कि वह लोगों को ज़्यादा बड़े पैमाने पर शुक्र-ए-ख़ुदावंदी के रास्ते से हटा सके। इसीलिए हदीस में इस फ़ित्ने को 'दज्जाल' या 'दज्जालियत' से ताबीर किया गया है।

शुक्र क्या है? शुक्र दरअसल ख़ुदा की नेमतों के एतिराफ़ का दूसरा नाम है। यह शुक्र हर ज़माने में इंसान से मतलूब था— पिछले ज़माने में

भी और मौजूदा ज़माने में भी। किसी इनाम पर देने वाले का एतिराफ़ करना एक फ़ितरी इंसानी जज़्बा है, लेकिन एतिराफ़ के लिए हमेशा किसी 'पॉइंट ऑफ रेफरेंस' (point of reference) की ज़रूरत होती है। मसलन जब आप खाने की कोई चीज़ खाते हैं, तो आपको 'फ़ूड आइटम' की सूरत में शुक्र या एतिराफ़ का एक 'पॉइंट ऑफ रिफरेंस' मिल जाता है और आप कहते हैं कि ख़ुदाया, तेरा शुक्र है कि तूने मुझे यह चीज़ खाने के लिए अता की।

लेकिन एक शख़्स जो जदीद इल्म-ए-नबातात (Botany), जदीद इल्म-ए-ज़राअत (Agriculture) और जदीद इल्म-ए-बाग़बानी (Horticulture) से वाक़िफ़ हो, उसके लिए यह मुमकिन हो जाएगा कि वह किसी 'फ़ूड आइटम' की मानवियत को हज़ारों गुना ज़्यादा अहमियत के साथ दरियाफ़्त कर सके। इस तरह उसका एहसास-ए-शुक्र आम इंसान के मुक़ाबले में बहुत ज़्यादा बढ़ जाएगा। जब वह कहेगा कि ख़ुदाया, तेरा शुक्र है कि तूने मुझे खाने के लिए यह 'फ़ूड आइटम' दिया, तो वह एक अज़ीम एहतिज़ाज़ (super thrill) के जज़्बे के तहत वह अल्फ़ाज़ बोलेगा, जिसका तजुर्बा पहले किसी इंसान को नहीं हो सकता था। पहला शख़्स जिस हक़ीक़त को सिर्फ़ ज़ायक़ा की सतह पर जानेगा, दूसरा शख़्स उसे वसी-तर इल्म, साइंस की सतह पर दरियाफ़्त करेगा। पहले शख़्स का एतिराफ़ अगर एक सादा एतिराफ़ होगा, तो दूसरे शख़्स का एतिराफ़ एक हिमालयाई एतिराफ़ बन जाएगा।

शुक्र-ए-क़लील, शुक्र-ए-कसीर

एक रिवायत के मुताबिक़, पैग़ंबर-ए-इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया—

مَنْ لَمْ يَشْكُرِ الْقَلِيلَ، لَمْ يَشْكُرِ الْكَثِيرَ.

"जो शख़्स कम पर शुक्र नहीं करेगा, वह ज़्यादा पर भी शुक्र नहीं करेगा।" (मुस्नद अहमद, हदीस नंबर 18449)

इस हदीस-ए-रसूल में फ़ितरत के एक क़ानून को बताया गया है। वह क़ानून यह है कि छोटे वाक़ये को याद करने से बड़े-बड़े वाक़यात ज़ेहन में ताज़ा हो जाते हैं।

नफ़्सियाती मुताला बताता है कि इंसान के दिमाग़ में बहुत-से अलग-अलग 'फोल्डर' होते हैं। मसलन मुहब्बत का फोल्डर, नफ़रत का फोल्डर, एतिराफ़ का फोल्डर, ज़ुल्म का फोल्डर वग़ैरह। जो चीज़ें इंसान के तजुर्बे और मुशाहिदे में आती हैं, उन्हें दिमाग़ अलग-अलग करके उनके मुताल्लिक़ फोल्डर में डालता रहता है। आदमी जब किसी एक वाक़ये से मुतास्सिर हो तो उस वक़्त इंसान का दिमाग़ 'ट्रिगर' हो जाता है और फिर फ़ौरी तौर पर ऐसा होता है कि इससे मुताल्लिक़ फोल्डर खुल जाता है और इस नौइयत के तमाम वाक़यात आदमी के ज़ेहन में ताज़ा हो जाते हैं।

फ़ितरत का यह क़ानून शुक्र और एतिराफ़ के मामले में भी बेहद अहमियत रखता है। मसलन आज आपको एक मोबाइल मिला। उससे आपने किसी दूसरे मक़ाम पर मौजूद एक शख़्स से बात की। उस वक़्त आपने सोचा कि पहले ज़माने में एक आदमी को किसी दूसरे मक़ाम पर मौजूद आदमी से राब्ता क़ायम करने में कितनी मुश्किलें पेश आती थीं। इस पर आपने गहरे तास्सुर के साथ ख़ुदा का शुक्र अदा किया, तो उसके बाद फ़ौरन यह होगा कि आपका दिमाग़ ट्रिगर हो जाएगा। उसी वक़्त दिमाग़ का वह फोल्डर खुल जाएगा, जिसमें आपकी पूरी ज़िंदगी में पेश आने वाले शुक्र व एतिराफ़ के तमाम आइटम महफ़ूज़ हैं। फ़ितरत के इस निज़ाम के तहत ऐसा होता है कि शुक्र के छोटे वाक़ये की याद शुक्र के दूसरे तमाम वाक़यात को याद दिला देता है। इस तरह शुक्र का छोटा वाक़या बड़े शुक्र का सबब बन जाता है, यहाँ तक कि आदमी के दिल में शुक्र का चश्मा जारी हो जाता है। शुक्र का एहसास

ख़ुदा से आदमी के ताल्लुक़ को बढ़ाता रहता है, यहाँ तक कि वह आला मारिफ़त के दर्जे तक पहुँच जाता है।

शुक्र सबसे बड़ी इबादत

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की एक हदीस मुख़्तलिफ़ किताबों में आई है। मसलन सही अल-बुख़ारी, हदीस नंबर 6490; सही मुस्लिम, हदीस नंबर 2963; जामे अल-तिरमिज़ी हदीस नंबर 2513; सुनन इब्न माजा, हदीस नंबर 4142 वग़ैरह। मुस्नद अहमद के अल्फ़ाज़ ये हैं—

انْظُرُوا إِلَى مَنْ أَسْفَلَ مِنْكُمْ، وَلَا تَنْظُرُوا إِلَى مَنْ هُوَ فَوْقَكُمْ، فَهُوَ أَجْدَرُ أَنْ لَا تَزْدَرُوا نِعْمَةَ اللهِ۔ قَالَ أَبُو مُعَاوِيَةَ۔ عَلَيْكُمْ.

"तुम उसे देखो, जो तुमसे नीचे है और तुम उसे न देखो, जो तुमसे ऊपर है, क्योंकि इस तरह तुम अपने ऊपर अल्लाह की नेमत को कम नहीं समझोगे।"

(मुस्नद अहमद, हदीस नंबर 10246)

इस हदीस की मज़ीद तशरीह एक और हदीस से होती है। एक रिवायत के मुताबिक़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया—

خَصْلَتَانِ مَنْ كَانَتَا فِيهِ كَتَبَهُ اللهُ شَاكِرًا وَصَابِرًا ، مَنْ نَظَرَ فِي دِينِهِ إِلَى مَنْ هُوَ فَوْقَهُ ، وَنَظَرَ فِي دُنْيَاهُ إِلَى مَنْ هُوَ دُونَهُ ، فَحَمِدَ اللهَ ، كَتَبَهُ اللهُ شَاكِرًا صَابِرًا وَمَنْ نَظَرَ فِي دُنْيَاهُ إِلَى مَنْ هُوَ فَوْقَهُ فَأَسِفَ عَلَى مَا فَضَّلَهُ اللهُ عَلَيْهِ ، لَنْ يَكْتُبَهُ اللهُ شَاكِرًا وَلَا صَابِرًا.

दो सिफ़तें हैं, जो किसी के अंदर हों तो अल्लाह उसे शाकिर और साबिर लिख देता है। जो अपने दीन के मामले में उसे देखे, जो उसके ऊपर है और दुनिया के मामले में उसे देखे, जो उससे कम है। फिर वह अल्लाह का शुक्र अदा करे। अल्लाह उसे शाकिर और साबिर लिख देता है और जो अपने दुनिया के मामले में उसे देखे, जो उससे बढ़कर है, फिर वह उस पर अफ़सोस करे, जो माद्दी बरतरी अल्लाह ने उसके मुक़ाबिल को दी तो अल्लाह उसे हरगिज़ शाकिर-ओ-साबिर नहीं लिखेगा। (अल-तबरानी— मुस्नद अल-शामेयीन, , हदीस नंबर 505)

शुक्र सबसे बड़ी इबादत है। किसी बंदे से जो चीज़ सबसे ज़्यादा मतलूब है, वह यह है कि वह अल्लाह को एक अज़ीम एहसान करने वाले के तौर पर दरियाफ़्त करे। अल्लाह की नेमतों के एहसास से उसका सीना भरा हुआ हो। उसकी रूह में शुक्र का अबदी चश्मा जारी हो जाए। वह अल्लाह को एक ऐसी हस्ती के तौर पर पाए, जो उस पर बेहिसाब नेमतों की बारिश कर रहा है। यह शुऊर इतना ज़्यादा मज़बूत हो कि किसी भी हाल में उसका सीना शुक्र-ए-ख़ुदावंदी के एहसास से ख़ाली न हो।

यह कोई आसान बात नहीं। अपने आपको शुक्र के जज़्बे से सरशार रखने के लिए यह ज़रूरी है कि आदमी का शुऊर इस मामले में पूरी तरह ज़िंदा हो। वह उसका मुसलसल एहतिमाम करे। वह किसी ऐसे ख़याल को अपने दिल में जगह न दे, जो उसके जज़्बा-ए-शुक्र को कम करने वाला हो। वह सब कुछ बर्दाश्त कर ले, मगर वह अपने जज़्बा-ए-शुक्र का नुक़सान (erosion) कभी बर्दाश्त न करे। मौजूदा दुनिया में फ़ितरी तौर पर हमेशा ऐसा होता है कि लोगों के दरमियान ना-बराबरी क़ायम रहती है। इस बिना पर हर आदमी

यह महसूस करता है कि माद्दी एतिबार से कोई उससे कम है और कोई उससे ज़्यादा। अब अगर आदमी अपना मुक़ाबला उस शख़्स से करे, जो बज़ाहिर उससे ज़्यादा है तो उसके अंदर कमतरी का एहसास पैदा होगा और उसका जज़्बा-ए-शुक्र दबकर रह जाएगा। इसलिए आदमी को ऐसा कभी नहीं करना चाहिए कि वह अपना मुक़ाबला (comparison) उससे करे, जो माद्दी एतिबार से बज़ाहिर उससे ज़्यादा है। इसके बजाय आदमी को यह करना चाहिए कि वह अपना मुक़ाबला उन लोगों से करे, जो माद्दी एतिबार से उससे कम हैं। इस तरह उसका जज़्बा-ए-शुक्र ज़िंदा रहेगा। उसका दिल कभी नेमत के एहसास से ख़ाली न हो सकेगा।

मौजूदा दुनिया में हमेशा ऐसा होता है कि तमाम लोग माद्दी एतिबार से यकसाँ नहीं होते। कोई ज़्यादा होता है और कोई कम, कोई पीछे होता है और कोई आगे, कोई ताक़तवर होता है और कोई कमज़ोर। इस क़िस्म के तमाम फ़र्क़ इम्तिहान की मस्लहत की बिना पर हैं। उनका मक़सद यह है कि आदमी मुख़्तलिफ़ क़िस्म के हालात से गुज़रे, मगर वह हालात से मुतास्सिर हुए बग़ैर अपने ईमानी शुऊर को ज़िंदा रखे। वह ना-शुक्री वाले हालात से दो-चार हो, फिर भी उसके शुक्र के जज़्बे में कोई कमी न आए। वह बे-एतिराफ़ी की सूरतेहाल से गुज़रे, मगर वह अपने एतिराफ़ की सिफ़त को न खोए। वह मनफ़ी जज़्बात पैदा करने वाले हालात से दो-चार हो, उसके बावजूद वह अपने आपको मुस्बत तर्ज़-ए-फ़िक्र पर क़ायम रखे। शुक्र वह सबसे क़ीमती पूँजी है, जिसे इंसान अपने रब के सामने पेश कर सकता है। ऐसी हालत में अक़्लमंद इंसान वह है, जो अपने सीने को शुक्र के एहसास से ख़ाली न होने दे, हत्ता कि इंतिहाई ग़ैर-मुवाफ़िक़ सूरतेहाल में भी।

शुक्र में जीना सीखिए

किसी इंसान को शुक्र का आला दर्जा कैसे हासिल होता है? मई, 2012 में मैंने तुर्की का सफ़र किया। वहाँ मुझे जो पानी पीने के लिए दिया गया, वह पानी इतना ज़्यादा ताज़ा था और पीने में पूरी तरह से मेरे आला ज़ौक़ के मुताबिक़ था। मैंने पानी का ग्लास मेज़ पर रख दिया और सोचने लगा कि ख़ालिक़ ने यह कैसे जाना कि मेरे बंदे को ऐसा पानी चाहिए और उसने फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि मेरे बंदे की ऐन तलब के मुताबिक़ उसे पानी फ़राहम करें।

कोई चीज़ पुर-लज़्ज़त इसीलिए है कि हमारे अंदर लज़्ज़त का एहसास मौजूद है। अगर लज़्ज़त का एहसास न हो, तो कोई भी चीज़ लज़्ज़त का ज़रिया नहीं बन सकती। साइंसी रिसर्च से मालूम हुआ है कि इंसान की ज़बान में तक़रीबन दस हज़ार ज़ायक़ा-ख़ाने (taste buds) हैं। इसका मतलब यह हुआ कि इंसान के अंदर जितने ज़ायक़ा-ख़ाने हैं, उनके ऐन मुताबिक़ ख़ुदा ने हमारे आस-पास की दुनिया में तसकीन का सामान भी मुहय्या कर दिया है। यह ख़ुदा की क़ुदरत का इंतिहाई अनोखा ज़ाहिरा है, क्योंकि इंसान का मामला यह है कि वह किसी ज़ायक़े को उस वक़्त जानता है, जबकि वह ख़ुद उसका तजुर्बा करे। ज़ाती तजुर्बे के बग़ैर किसी ज़ायक़े को जानना इंसान के लिए मुमकिन नहीं।

एक संजीदा इंसान जब दुनिया में किसी ज़ायक़े का तजुर्बा करता है तो यह एहसास उसे शुक्र के अथाह जज़्बे से सरशार कर देता है। वह चाहता है कि वह इस देने वाले का एतिराफ़ करे, लेकिन वह महसूस करता है कि उसके पास वह अल्फ़ाज़ नहीं, जिनके ज़रिये वह इस अज़ीम नेमत का एतिराफ़ कर सके। यह उसके लिए एक नाक़ाबिल-ए-तसव्वुर तजुर्बा होता है। इसी तजुर्बे का नाम शुक्र है।

यह तजुर्बा इतना ज़्यादा आला होता है कि ख़ुदा के लिए ज़बान से शुक्र की अदायगी के हर अल्फ़ाज़ उसे कमतर लगने लगते हैं। वह चाहता है कि उसकी पूरी शख़्सियत एक ज़बान बन जाती और वह अपने पूरे वजूद के साथ अपने रब का शुक्र अदा करता। उसका पूरा वजूद शुक्र के एहसास में ढल जाता और वह ज़बान से शुक्र के अल्फ़ाज़ बोलने वाला नहीं, बल्कि सरापा शुक्र में जीने वाला इंसान बन जाता।

शुक्र का मुहर्रिक

तक़रीबन तेरह बिलियन साल पहले सोलर सिस्टम वजूद में आया। उस वक़्त ज़मीन के ऊपर सिर्फ़ गैस थी। फिर गैस के ज़रिये पानी बना। पानी का फॉर्मूला H_2O है यानी ज़मीन में ऐसे मॉलिक्यूल रख दिए गए, जिनमें हाइड्रोजन के दो एटम होते हैं और ऑक्सीजन का एक एटम। इस तरह ज़मीन के ऊपर पानी वजूद में आया। यह पानी बड़े पैमाने पर समंदर की गहराइयों में जमा हो गया। इब्तिदा में क़ुदरत ने इस पानी में हिफ़ाज़ती माद्दे के तौर पर नमक शामिल किया। यह नमक-आमेज़ पानी बराहे-रास्त तौर पर इंसान के लिए क़ाबिल-ए-इस्तेमाल न था। फिर ज़मीन के ऊपर सूरज की हरारत और पानी के तअम्मुल से हैरत-अंगेज़ तौर पर बारिश का इंतिज़ाम हुआ। फ़ितरी तौर पर नमक का वज़न ज़्यादा था और पानी का वज़न कम। चुनाँचे जब समंदर की सतह पर सूरज की हरारत पहुँची तो समंदर का पानी फ़ितरी क़ानून के तहत डी-सैलिनेशन के प्रोसेस से गुज़रा यानी पानी भाप बनकर नमक से अलग हो गया। नमक समंदर में रह गया और पानी भाप बनकर फ़िज़ा में बुलंद हुआ, वहाँ वह बादल बना और आख़िरकार वह पानी बारिश की सूरत में दोबारा ज़मीन पर बरसा।

इस पानी ने ज़मीन को सैराब किया और चश्मों व दरियाओं की सूरत में महफ़ूज़ हो गया।

फ़ितरत के निज़ाम के तहत यह एक साइकिल है, जो मुसलसल तौर पर जारी है। पानी का यही निज़ाम है, जिसने ज़मीन को इंसान के लिए हयात बख़्श सय्यारा बनाकर रखा है। अगर यह निज़ाम न हो तो इंसान ज़मीन के ऊपर ज़िंदा समाज न बना सके। ज़मीन पर तहज़ीब की तश्कील पानी के बग़ैर नामुमकिन हो जाए। इस पूरे अमल पर ग़ौर किया जाए, तो इसमें हिक्मत के इतने ज़्यादा पहलू हैं, जो इंसान के लिए 'माइंड बॉगलिंग ज़ाहिरा' (mind-boggling phenomena) की हैसियत रखते हैं। क़दीम ज़माने का इंसान इन हक़ीक़तों से बे-ख़बर था, मगर अब साइंसी मुताले के ज़रिये ये हक़ीक़तें इंसान के इल्म में आ गई हैं। इन हक़ीक़तों को जानना इंसान के लिए अथाह खज़ाने की हैसियत रखता है। ग़ालिबन यही वह अज़ीम हक़ीक़त है, जिसे क़ुरआन में इन अल्फ़ाज़ में बयान किया गया है—

وَإِنْ تَعُدُّوا نِعْمَةَ اللَّهِ لَا تُحْصُوهَا.

> "अगर तुम अल्लाह की नेमतों को गिनो तो तुम उन्हें गिन न सकोगे।" (16:18)

फ़ख़्र और शुक्र

एक तालीम-याफ़्ता मुसलमान ने पुर-एतिमाद लहजे में कहा— "मैं पूरे फ़ख़्र और शुक्र के साथ कहता हूँ कि अल्लाह तआला ने मुझे फ़ुलाँ दीनी माहौल में पैदा किया और उसने मुझे फ़ुलाँ इदारे में तालीम व तर्बियत हासिल करने का मौक़ा अता फ़रमाया वग़ैरह।"

यह किसी एक शख़्स की बात नहीं। इस क़िस्म की बात बहुत-से लोग अपने-अपने अंदाज़ में कहते हैं। यह अल्फ़ाज़ बज़ाहिर ख़ूबसूरत मालूम होते हैं, लेकिन वह इंतिहाई बे-माना हैं। हक़ीक़त यह है कि फ़ख़्र और शुक्र दोनों दो मुख़्तलिफ़ जज़्बात हैं। जहाँ फ़ख़्र होगा, वहाँ शुक्र नहीं होगा और जहाँ शुक्र होगा, वहाँ फ़ख़्र नहीं होगा। जो लोग ऐसे अल्फ़ाज़ बोलें, उनके अंदर फ़ख़्र तो हो सकता है, लेकिन हक़ीक़ी शुक्र का जज़्बा उनके अंदर हरगिज़ मौजूद नहीं हो सकता।

शुक्र क्या है? शुक्र दरअसल ख़ुदावंद-ए-ज़ुलजलाल की नेमतों का एतिराफ़ है। ख़ुदावंद-ए-ज़ुलजलाल की नेमत का एहसास फ़ौरन ही आदमी के अंदर अपने बे-हैसियत होने का एहसास पैदा कर देता है और अपने बे-हैसियत होने के एहसास के बाद कोई शख़्स कभी फ़ख़्र का तहम्मुल नहीं कर सकता। इस क़िस्म के एहसास के बाद आदमी अपने आपको 'बे-कुछ' के मक़ाम पर पाता है और ख़ुदावंद-ए-ज़ुलजलाल को 'सब कुछ' के मक़ाम पर। जो आदमी इस क़िस्म की नफ़्सियात का हामिल हो, उसके लिए फ़ख़्र एक बे-माना लफ़्ज़ बन जाएगा। ऐसा आदमी सब कुछ भूलकर शुक्र-ए-ख़ुदावंदी के जज़्बे से सरशार हो जाएगा। उसके अंदर फ़ख़्र जैसी चीज़ के लिए कोई जगह न होगी। शुक्र की तौफ़ीक़ हमेशा मुकम्मल आजिज़ी की सतह पर होती है। जिस आदमी के अंदर मुकम्मल आजिज़ी की आला रब्बानी सिफ़त न हो, वह शुक्र का तजुर्बा भी नहीं कर सकता।

फ़ख़्र के साथ शुक्र का लफ़्ज़ बोलना यह बताता है कि ऐसा आदमी, इम्तिहान की बोलचाल में, नेगेटिव मार्किंग (negative marking) का मुस्तहिक़ है। ऐसा कहने वाला शख़्स इस बात का सबूत दे रहा है कि वह फ़ख़्र और शुक्र दोनों की असल हक़ीक़त से

बे-ख़बर है। वह न फ़ख़्र की नफ़्सियात को जानता है और न शुक्र की नफ़्सियात को। अगर वह दोनों की हक़ीक़त से बाख़बर होता तो वह इस तरह फ़ख़्र और शुक्र के बेमेल अल्फ़ाज़ को एक साथ न बोलता। हक़ीक़त यह है कि शुक्र हमेशा फ़ख़्र से दूरी की बिना पर पैदा होता है, न कि फ़ख़्र के इज़्हार की बिना पर।

इंसान का एतिराफ़

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ، قَالَ:قَالَ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ:مَنْ لَمْ يَشْكُرِ النَّاسَ، لَمْ يَشْكُرِ اللهَ.

“अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हा कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया— जो आदमी लोगों का शुक्र न करे, वह ख़ुदा का शुक्र भी नहीं करेगा।” (मुस्नद अहमद, हदीस नंबर 7504)

शुक्र एक कैफ़ियत का नाम है। यह कैफ़ियत किसी आदमी के दिल में पैदा हो जाए तो वह तक़्सीम होकर नहीं रह सकती। अगर वह एक मामले में ज़ाहिर होगी तो यह नामुमकिन है कि वह इसी क़िस्म के दूसरे मामले में ज़ाहिर न हो। जब आदमी एक का शुक्रगुज़ार होगा तो वह दूसरे का भी ज़रूर शुक्रगुज़ार होगा।

बंदे का एहसान आँख से दिखाई देता है, वह एक बराह-ए-रास्त तजुर्बा है। इसके बरअक्स ख़ुदा का जो एहसान है, वह ज़ाहिरी आँख से दिखाई नहीं देता, वह आदमी के लिए बराह-ए-रास्त तजुर्बा नहीं। ख़ुदा के एहसान को सोचकर जानना पड़ता है। बंदे के एहसान को आदमी ब-ज़रिया-ए-मुशाहिदा (through observation) जानता है और ख़ुदा के एहसान को ब-ज़रिया-ए-तफ़क्कुर (through contemplation)।

जो आदमी बराह-ए-रस्त मुशाहिदा (direct observation) में आने वाले वाक़ये का एहसास न कर सके, वह ऐसे वाक़ये को क्यूँ-कर महसूस करेगा, जो बिल वास्ता ग़ौर-ओ-फ़िक्र (indirect contemplation) के ज़रिये मालूम किया जा सकता है।

कोई एहसान करने वाला जब एहसान करता है, तो आदमी उसके एहसान का एतिराफ़ इसलिए नहीं करता कि वह समझता है कि इस तरह मैं एहसान करने वाले की निगाह में छोटा हो जाऊँगा। हालाँकि ऐसा करके वह ख़ुद अपना नुक़सान करता है। इसके बाद वह अपने ज़मीर की निगाह में छोटा हो जाता है। वह अपने ज़मीर के नज़दीक कम बन जाता है और बिला शुब्हा अपने ज़मीर के नज़दीक कम होना दूसरे के नज़दीक कम होने से ज़्यादा सख़्त है।

इससे भी ज़्यादा बड़ा नुक़सान यह है कि बंदों के एहसान न मानने से आदमी के अंदर बे-एतराफ़ी का मिज़ाज बनता है। अव्वलन वह इंसान का एतिराफ़ नहीं करता और इसके बाद उसका बिगड़ा हुआ मिज़ाज उसे यहाँ तक ले जाता है कि वह रब्बुल आलमीन का भी सच्चा एतिराफ़ नहीं कर पाता और बिला शुब्हा इससे ज़्यादा घाटा उठाने वाला और कोई नहीं, जो अपने रब का एतिराफ़ करने से आजिज़ रहे।

दौर-ए-शुक्र

नवंबर, 1992 में मेरा एक सफ़र नागपुर के लिए हुआ। 8 नवंबर को मैंने फ़ज्र की नमाज़ निज़ामुद्दीन की सात सौ साला क़दीम काली मस्जिद में पढ़ी थी। फिर ज़ुहर की नमाज़ मैंने दिल्ली एयरपोर्ट पर पढ़ी और अस्र की नमाज़ नागपुर पहुँचकर अदा की। ब-ज़ाहिर यह एक सादा-सा

वाक़या है, जो हर रोज़ बहुत-से मुसलमानों के साथ पेश आता है, मगर जब मैंने ग़ौर किया तो मुझे इस छोटे-से वाक़ये में बहुत बड़ा सबक़ छिपा हुआ नज़र आया। इसका मतलब यह था कि मैं दिल्ली में भी इस्लामी इबादत करने के लिए आज़ाद था। इसी तरह मैं राजधानी के एयरपोर्ट पर भी इस्लामी इबादत आज़ादाना तौर पर कर सकता था और दिल्ली से ग्यारह सौ किलोमीटर दूर नागपुर में भी यह आज़ादी हासिल थी कि मैं इत्मीनान के साथ इस्लाम के बताए हुए तरीक़े के मुताबिक़ अल्लाह की इबादत करूँ।

फिर इसका मुक़ाबला मैंने क़दीम मक्की दौर से किया, जबकि इस्लाम का इब्तिदाई ज़माना था। उस वक़्त पैग़ंबर-ए-इस्लाम और अहले-इस्लाम को यह आज़ादी हासिल न थी कि खुले तौर पर वह नमाज़ अदा कर सकें, हत्ता कि नमाज़ बा-जमात अदा करने के मुवाक़े भी उस वक़्त मौजूद न थे, मगर आज तमाम मुसलमानों को मुकम्मल तौर पर दीनी आज़ादी हासिल है।

यह वाक़या मेरे लिए एक अलामत बन गया, जिसमें मुझे इस्लाम की तारीख़ आगे की तरफ़ सफ़र करती हुई नज़र आने लगी। मुझे दिखाई दिया कि आज मुसलमानों की हालत लायक़-ए-शुक्र है, न कि लायक़-ए-शिकायत। आज हम इस्लाम के उम्मीद दिलाने वाले मरहले में हैं, न कि उम्मीद तोड़ने वाले मरहले में।

मैंने सोचा कि जदीद तहज़ीब ने इंसानों (मुसलमानों को मिलाकर) के लिए हर एतिबार से कितनी ज़्यादा आसानियाँ पैदा कर दी हैं। इसके बावजूद इंसान ख़ुदा का शुक्र अदा नहीं करता। मौजूदा ज़माने में जो चीज़ सबसे ज़्यादा उठ गई है, वह शुक्र है। साइंसी दरियाफ़्त, सनअती इन्फ़िजार (industrial explosion) और मज़हबी आज़ादी के इस दौर में यह होना चाहिए था कि इंसान हमेशा से ज़्यादा शुक्र करने वाला

बन जाए, मगर बरअक्स तौर पर ऐसा हुआ कि वह हमेशा से ज़्यादा ना-शुक्री करने वाला बन गया। इस मामले में मुसलमानों और ग़ैर-मुसलमानों में कोई फ़र्क़ नहीं है।

शुक्र, न कि शिकायत

5 सितंबर, 2003 को जुमा का दिन था। मैंने निज़ामुद्दीन की कलाँ मस्जिद में नमाज़ अदा की। इमाम साहिब ने ख़ुत्बे से पहले अपनी तक़रीर में बताया कि 1947 में यह मस्जिद कुछ हिंदुओं के क़ब्ज़े में चली गई थी। हमने दोबारा क़ब्ज़ा करके इसे आबाद करना चाहा तो पुलिस केस बन गया और अदालती कार्रवाई की नौबत आ गई। अदालत के सामने यह सवाल था कि क्या 15 अगस्त, 1947 से पहले यह इमारत एक मस्जिद थी और वह मस्जिद के तौर पर इस्तेमाल होती थी। हिंदू जज ने तीन आदमियों की गवाही पर मस्जिद के हक़ में अपना फ़ैसला दिया। यह तीनों दिल्ली के तीन हिंदू थे। उनमें से एक ब्राह्मण था, दूसरा बनिया और तीसरा हरीजन।

कलाँ मस्जिद तक़रीबन 800 साल पहले तुग़लक़ दौर में बनाई गई थी। मैं 1983 से इस मस्जिद में नमाज़ पढ़ता रहा हूँ। पहले यह मस्जिद तक़रीबन खंडहर की हालत में थी। अब यहाँ मस्जिद की शानदार इमारत खड़ी हुई है। यह एक अलामत है, जो बताती है कि इस मुल्क में मिल्लत-ए-मुस्लिमा का मुस्तक़बिल दिन-ब-दिन बेहतर हालत की तरफ़ जा रहा है।

इसी तरह का वाक़या है। अप्रैल, 1996 में मेरठ और इसके अतराफ़ के लिए मेरा सफ़र हुआ। 12 अप्रैल को जुमा का दिन था। सरधना की

जामा मस्जिद में मैंने अपने मुक़ामी साथियों के साथ जुमा की नमाज़ पढ़ी। काफ़ी बड़ी मस्जिद है, अंदर से बाहर तक नमाज़ियों से भरी हुई थी। मैंने सोचा कि मौजूदा मुसलमानों से जो सबसे बड़ी चीज़ उठ गई है, वह शुक्र-ए-ख़ुदावंदी का जज़्बा है। चुनाँचे एक मस्जिद के साथ किसी वजह से कोई ना-ख़ुशगवार वाक़या पेश आ जाए, तो हर ज़बान और हर क़लम उसके पुरजोश तज़्किरे में मसरूफ़ हो जाती है, मगर इस मुल्क में लाखों मस्जिदें शानदार तौर पर आबाद हैं और इसका कोई मुस्बत तौर पर ज़िक्र करने वाला नहीं।

मुझे याद आता है कि 40 साल पहले मैं यूपी में अपने आबाई गाँव बढरया, ज़िला आज़मगढ़, में रहता था। मेरे घर के क़रीब एक मस्जिद थी। उसमें अक्सर ऐसा होता था कि मैं ही मुअज़्ज़िन होता था, मैं ही इमाम और मैं ही मुक़तदी। ख़ास तौर पर इशा की नमाज़ मुझे इस तरह पढ़नी होती थी कि मैं लालटेन लेकर मस्जिद जाता, जो गाँव के बाहर खेतों के किनारे वाक़े थी। रात के सुनसान माहौल में इशा की नमाज़ पढ़ना बड़ा अजीब तजुर्बा था। उस वक़्त वहाँ मेरे साथ कोई और नमाज़ी नहीं होता था। मैं ख़ुद ही अज़ान देता और ख़ुद ही तकबीर कहकर जमात के तौर पर नमाज़ अदा करता और फिर लालटेन लेकर वापस अपने घर आ जाता।

मगर अब 40 साल के बाद मस्जिद समेत यह पूरी जगह निहायत बा-रौनक हो गई है। अब वहाँ मस्जिद से मिली हुई सड़क गुज़र रही है। बिजली और टेलीफ़ोन आ चुका है। मस्जिद के बिलकुल सामने एक मेयारी स्कूल क़ायम हो गया है। अब यहाँ रात-दिन चहल-पहल रहती है।

इस क़िस्म के वाक़यात हर जगह पेश आ रहे हैं। इन वाक़यात में निहायत उम्मीद-अफ़्ज़ा पैग़ाम छिपा हुआ है, मगर अजीब बात

है कि मौजूदा ज़माने में तमाम मुसलमान, मज़हबी और ग़ैर-मज़हबी दोनों, शिकायत की बोली बोलते हैं। मुझे अपने तजुर्बे में पूरी मुस्लिम दुनिया में कोई शख़्स नहीं मिला, जो शिकायत से ख़ाली हो और हक़ीक़ी तौर पर शुक्र के जज़्बे से सरशार होकर 'हम्द कल्चर' या मुस्बत सोच में जीता हो।

उर्दू के एक शायर ने क़दीम ज़माने में हज़रत हुसैन और उनके ख़ानदान के लोगों के कर्बला के सफ़र का नक़्शा खींचते हुए कहा था कि ख़ुदा ने फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि ज़मीन को मुख़्तसर करके उनका रास्ता आसान बना दो—

"तनाबें खींचकर कम कर ज़मीं को,
कि होवे राह कम उन मह-जबीं को।"

आज अल्लाह तआला ने हर आदमी के लिए 'ज़मीन की तनाबें खींचकर' सफ़र को मुख़्तसर बना दिया है यानी जदीद वसाइल के ज़रिये फ़ासलों को कम कर दिया है। मसलन हवाई जहाज़ की सवारी आज बहुत ज़्यादा आम हो चुकी है। इसलिए लोगों को इसके ग़ैर-मामूलीपन का एहसास नहीं होता। हक़ीक़त यह है कि हवाई जहाज़ अल्लाह तआला की एक अज़ीम नेमत है। हवाई जहाज़ ने आज लंबे सफ़रों को हर आदमी के लिए मुमकिन बना दिया है, वरना क़दीम ज़माने में बहुत ही कम अफ़राद लंबे सफ़र का हौसला कर सकते थे, मगर क़ुरआन के मुताबिक़, इंसानों में सबसे कम वे लोग हैं, जो क़ाबिल-ए-शुक्र बातों को शिद्दत के साथ महसूस करें और शुक्र के जज़्बात से सरशार हो जाएँ (सूरह सबा, 34:13)।

इज़ाफ़ा-ए-ईमान

साइंसी अंदाज़े के मुताबिक़, सूरज हमारी ज़मीन से तक़रीबन 9 करोड़ 30 लाख मील दूर है। सूरज हमारी ज़मीन से 1 लाख 30 हज़ार गुना बड़ा है। सूरज ज़मीन की मानिंद ठोस नहीं है, बल्कि वह पूरा-का-पूरा एक अज़ीम दहकता हुआ शोला है। इसकी गर्मी 11 हज़ार डिग्री फ़ारेनहाइट है। यह गर्मी इतनी ज़्यादा है कि सख़्त-तरीन माद्दा भी इसमें पिघले बग़ैर नहीं रह सकता। ज़मीन अगर उसके क़रीब की जाए तो वह एक सेकंड से भी कम अर्से में पिघलकर गैस बन जाएगी।

सूरज कैसे चमकता है और कैसे इतनी बड़ी मिक़दार में वह रोशनी और गर्मी दे रहा है? क़दीम ख़याल यह था कि सूरज मुसलसल जल रहा है, जैसे कोई लकड़ी या कोयला जलता है, मगर जब फ़लकियाती तहक़ीक़ (astronomical discovery) से मालूम हुआ कि वह हज़ारों मिलियन साल से इसी तरह रोशन है, तो यह ख़याल ग़लत साबित हो गया। सूरज में अगर कोई माद्दा जल रहा होता तो अब तक सूरज बुझ चुका होता, क्योंकि कोई चीज़ इतनी ज़्यादा लंबी मुद्दत तक जलती हुई हालत में नहीं रह सकती।

अब साइंसदानों का नज़रिया यह है कि सूरज की गर्मी इसी क़िस्म के एक अमल (process) का नतीजा है, जो ऐटम बम के अंदर पेश आता है यानी सूरज माद्दे को ऊर्जा में तब्दील करता है। यह अमल जलने से मुख़्तलिफ़ है। जलना माद्दे को एक सूरत से दूसरी सूरत में तब्दील करता है, मगर जब माद्दे को ऊर्जा में बदला जाए तो बहुत ज़्यादा ऊर्जा सिर्फ़ थोड़े-से माद्दे के ज़रिये हासिल की जा सकती है। माद्दे का एक किलो इतनी ज़्यादा ऊर्जा पैदा कर सकता है, जो एक मिलियन टन से ज़्यादा चट्टान को पिघला दे—

The sun changes matter into energy. This is different from burning. Burning changes matter from one form to another. But when matter is changed into energy, very little matter is needed to produce a tremendous amount of energy. One ounce of matter could produce enough energy to melt more than a million tons of rock.

कायनात में इस क़िस्म की अनगिनत निशानियाँ पाई जाती हैं। ये निशानियाँ बताती हैं कि कायनात के पीछे एक अज़ीम ख़ालिक़ की हस्ती काम कर रही है। अज़ीम ख़ालिक़ के बग़ैर कभी इस क़िस्म की अज़ीम तख़्लीक़ ज़हूर में नहीं आ सकती। क़ुरआन में बार-बार कायनाती निशानियों पर ग़ौर करने के लिए कहा गया है। यह ग़ौर-ओ-फ़िक्र एक ख़ालिस दीनी अमल है, वह मोमिन के ईमान में ग़ैर-मामूली इज़ाफ़े का सबब बनता है, वह मोमिन के शुक्र के जज़्बे को बेपनाह हद तक बढ़ा देता है।

जुलाई, 2001 में मेरा एक सफ़र स्विट्ज़रलैंड के लिए हुआ। हमारा जहाज़ 25 जुलाई की सुबह को ठीक वक़्त पर ज़्यूरिक, स्विट्ज़रलैंड पहुँच गया। जहाज़ जब एयरपोर्ट के क़रीब पहुँचकर नीचे उतरा तो चारों तरफ़ सरसब्ज़ मंज़र दिखाई दे रहे थे। यह एक ख़ूबसूरत दुनिया थी, जो गोया फ़ितरत के ख़ूबसूरत माहौल में बनाई गई थी। इसे देखकर मेरी ज़बान से निकला—

"It is like seeing paradise from a distance."

मुझे ऐसा महसूस होता है कि अल्लाह ने एक निहायत हसीन और मेयारी दुनिया बनाई, जहाँ इंसान अबदी तौर पर ख़ुशी से भरपूर ज़िंदगी गुज़ार सके। यह जन्नत है। फिर उसने एक और दुनिया मौजूदा ज़मीन की सूरत में बनाई। हमारी ज़मीन सारी कायनात में एक इंतिहाई

अनोखा इस्तिस्ना (exception) है। जैसा कि क़ुरआन में बताया गया है यानी इस दुनिया में जन्नत के मिलती-जुलती तमाम चीज़ें रख दी गई हैं (अल-बक़रह, 2:25) गोया मौजूदा दुनिया आख़िरत की कामिल जन्नत का एक नाक़िस तआरुफ़ है। यह दुनिया इंसान को इसलिए दी गई है, ताकि वह उसके अंदर जन्नत की इब्तिदाई झलक देखे और फिर उसका शुक्र अदा करके अबदी जन्नत का मुस्तहिक़ बने। इस हक़ीक़त की तरफ़ क़ुरआन में इन अल्फ़ाज़ में इशारा किया गया है—

وَإِذْ تَأَذَّنَ رَبُّكُمْ لَئِن شَكَرْتُمْ لَأَزِيدَنَّكُمْ.

> "अगर तुम शुक्र करोगे तो मैं तुम्हें (जन्नत की सूरत में) ज़्यादा दूँगा।" (14:7)

शुक्र का एक आइटम

एक रिवायत के मुताबिक़, पैग़ंबर-ए-इस्लाम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया—

إِذَا عَطَسَ أَحَدُكُمْ فَلْيَقُلِ الْحَمْدُ لِلَّهِ. وَلْيَقُلْ لَهُ أَخُوهُ أَوْ صَاحِبُهُ يَرْحَمُكَ اللَّهُ. فَإِذَا قَالَ لَهُ يَرْحَمُكَ اللَّهُ. فَلْيَقُلْ يَهْدِيكُمُ اللَّهُ وَيُصْلِحُ بَالَكُمْ.

> जब तुममें से किसी शख़्स को छींक आए तो वह कहे— अल्हम्दुलिल्लाह (अल्लाह का शुक्र है)। उस वक़्त उसका साथी यह कहे— यर हमुकल्लाह (अल्लाह की रहमत हो तुम पर)। उसके बाद छींकने वाला कहे— यह्दीकुमुल्लाहु व-युस्लिहु बा-लकुम (अल्लाह तुमको हिदायत दे और तुम्हारे हालात को दुरुस्त कर दे)।
>
> (सही अल-बुख़ारी, हदीस नंबर 6224)

छींक आने पर 'अल्हम्दुलिल्लाह' कहना महज़ कोई रस्मी बात नहीं। हक़ीक़त यह है कि छींक आना शुक्र का एक आइटम है। यह बात एक ताज़ा तहक़ीक़ से इल्मी तौर पर साबित हुई है। इस तहक़ीक़ से मालूम हुआ है कि छींक कोई बुरी चीज़ नहीं, वह फ़ितरत का एक अमल है। छींक से जिस्म में ताज़गी आती है—

Sneezing revives your body: A sneeze is your body's way of rebooting naturally and patients with disorders of the nose such as sinusitis sneeze more often as they can't reboot easily, a new study said. Researchers from the University of Pennsylvania found that our noses require ''reboot'' by the pressure force of a sneeze. (The Times of India, New Delhi, August 2, 2012, p. 15)

इससे मालूम हुआ कि छींक आना कोई सादा बात नहीं, छींक आना भी शुक्र का एक आइटम है। हर छींक पूरे जिस्म को ताज़गी अता करती है। मज़ीद यह कि छींक अल्लाह की नेमतों की एक याद-दहानी है। छींक के ज़रिये एक इंसान अल्लाह की एक नेमत को याद करके जब इस पर शुक्र अदा करता है, तो उस वक़्त उसका ज़ेहन बेदार (awaken) हो जाता है। इस ज़ेहनी बेदारी की बिना पर इंसान को शुक्र के दूसरे आइटम भी याद आने लगते हैं। शुक्र के एक आइटम पर शुक्र करके आदमी शुक्र के दूसरे आइटम पर भी शुक्र करने के क़ाबिल हो जाता है।

बोलने की सलाहियत

एक तालीम-याफ़्ता मुसलमान से मुलाक़ात हुई। वे दावत के काम को अहम काम समझते थे। उन्होंने कहा कि मुझे यह देखकर बहुत

अफ़सोस होता है कि मदारिस के उलमा में दावत का शौक़ नहीं। वे बस मदरसे के काम में लगे रहते हैं और इसी को सब कुछ समझते हैं।

उनकी बातें सुनकर मुझे महसूस हुआ कि उनके अंदर बहुत अच्छा स्पीकिंग पावर है। मैंने उनसे कहा कि आप मदारिस के लोगों को देखकर मनफ़ी एहसास में मुब्तला हो रहे हैं। आप ऐसा कीजिए कि मदारिस के लोगों को लेकर मत सोचिए, बल्कि ख़ुद अपने आपको लेकर सोचिए। अगर आप ख़ुद अपने आपको लेकर सोचें तो आप दरियाफ़्त करेंगे कि आपको अल्लाह तआला ने बहुत अच्छी स्पीकिंग पावर दी है। आप अपनी इस सलाहियत को दावत के काम में इस्तेमाल कीजिए और मुझे यक़ीन है कि सारे शहर में आपसे अच्छा स्पीकर न होगा।

आपके अंदर बोलने की फ़ितरी सलाहियात बहुत आला दर्जे में मौजूद है। अब आप सिर्फ़ इतना कीजिए कि दावत के मौज़ू पर अपना मुताला बढ़ाइए। आप दावत के एतिबार से अपने आपको मज़ीद तैयार कीजिए और फिर दावत के मैदान में काम करना शुरू कर दीजिए। मैंने कहा कि आप अकेले ही, इंशाल्लाह, दावती काम के लिए काफ़ी हैं। आप अपने आपको लेकर सोचिए, आप दूसरों को लेकर सोचना बंद कर दीजिए और फिर आपको किसी से शिकायत न होगी।

लोगों में यह गलती बहुत आम है। लोगों का हाल यह है कि अपने आपको लेकर नहीं सोचते, बल्कि दूसरों को लेकर सोचते हैं। इस तर्ज़-ए-फ़िक्र का नतीजा यह होता है कि लोगों के अंदर मनफ़ी नफ़्सियात पैदा हो जाती है। अगर वह मुस्बत नफ़्सियात में जीने वाले बन जाएँ तो ख़ुदा के वादे का मुस्तहिक़ बन सकते हैं, जो क़ुरआन में इन अल्फ़ाज़ में बयान किया गया है—

وَإِذْ تَأَذَّنَ رَبُّكُمْ لَئِن شَكَرْتُمْ لَأَزِيدَنَّكُمْ.

"अगर तुम शुक्र करोगे तो मैं तुम्हें ज़्यादा दूँगा।" (14:7)

लेकिन वे ग़ैर-ज़रूरी तौर पर अपने आपको इस नेमत से महरूम कर लेते हैं। शुक्र में जीने वाला इंसान बनने के लिए ज़रूरी है कि आदमी मुस्बत सोच में जीने वाला इंसान बने।

शुक्र की नफ़्सियात में जीना

मुसलमान हर रोज़ अपनी नमाज़ में क़ुरआन की यह आयत पढ़ते हैं—

الحَمدُ لِلَّهِ رَبِّ العالَمِينَ.

"सारी हम्द सिर्फ़ अल्लाह के लिए है, जो सारे जहान का रब है।" (1:2)

हम्द की हक़ीक़त शुक्र है। 'सारी हम्द अल्लाह के लिए है' का मतलब यह है कि सारा शुक्र अल्लाह के लिए है।

क़ुरआन की इस आयत का तक़ाज़ा यह नहीं है कि इसे सिर्फ़ ज़बान से पढ़ दिया जाए, बल्कि वह एक तर्बियत का कलिमा है। वह हर रोज़ मुसलमान को एक हक़ीक़त की याद दिलाता है। वह यह कि इंसान को चाहिए कि वह रोज़ाना पेश आने वाले वाक़यात पर ग़ौर करे। वह वाक़यात की ऐसी मुस्बत तौजीह (positive explanation) तलाश करे, जो इसे हर हाल में शुक्र करने वाला इंसान बना दे, वह हर दिन इस एहसास से भरा रहे कि कायनात का ख़ालिक़ एक निहायत मेहरबान ख़ालिक़ है, वह हर वक़्त ख़ालिक़ के लिए और तमाम इंसानों के लिए शुक्र व एतिराफ़ का रेस्पॉन्स देता रहे।

क़ुरआन की यह आयत मोमिन की हक़ीक़ी तस्वीर को बता रही है। सच्चा मोमिन वह है, जो 'अलहम्दुलिल्लाह' की नफ़्सियात में जिए। इसके बरअक्स जो इंसान अमलन 'ला हम्दुलिल्लाह' की नफ़्सियात में जीता हो, वह सच्चा मोमिन नहीं। वह ज़बान से तो 'अलहम्दुलिल्लाह' कहता है, लेकिन उसका दिल शिकायती मिज़ाज की बिना पर अमलन यह कह रहा होता है कि 'ला हम्दुलिल्लाह' यानी अल्लाह के लिए कोई हम्द नहीं। यह नफ़्सियात मुनाफ़क़त की नफ़्सियात है, न कि ईमान की नफ़्सियात।

इस मामले का ताल्लुक़ हालात की तौजीह से है। जो आदमी हालात की मुस्बत तौजीह करे, वह 'अलहम्दुलिल्लाह' की नफ़्सियात में जिएगा और जो आदमी हालात की मुस्बत तौजीह न कर सके, वह 'ला हम्दुलिल्लाह' की नफ़्सियात में जीने वाला इंसान बन जाएगा। 'अलहम्दुलिल्लाह' शुक्र का कलिमा है और 'ला हम्दुलिल्लाह' ना-शुक्री का कलिमा। गोया कि 'अलहम्दुलिल्लाह' कहने से पहले एक और चीज़ मतलूब है और वह है 'अलहम्दुलिल्लाह' की शुऊरी मारिफ़त (realisation)। जो आदमी 'अलहम्दुलिल्लाह' कहने से पहले उसकी शुऊरी मारिफ़त हासिल कर चुका हो, वही दुरुस्त तौर पर 'अलहम्दुलिल्लाह' कहेगा और जो आदमी इस शुऊरी मारिफ़त से ख़ाली हो, उसकी ज़िंदगी में 'अलहम्दुलिल्लाह' एक हक़ीक़त के तौर पर शामिल नहीं हो सकता।

शुक्र और ना-शुक्री

पैग़ंबर-ए-इस्लाम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़माने में एक ग़ज़्वा पेश आया, जिसे ग़ज़्वा-ए-हुनैन कहा जाता है। इस ग़ज़्वे

में काफ़ी भेड़-बकरी ग़नीमत की सूरत में हासिल हुईं। रसूलुल्लाह ने ग़नीमत का सामान मुहाजिरीन में तक़्सीम कर दिया और अंसार को कुछ नहीं दिया। यह देखकर अंसार के कुछ अफ़राद को शिकायत पैदा हुई। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को मालूम हुआ तो आपने अंसार के लोगों को जमा करके एक तक़रीर की। आपने फ़रमाया कि ऐ अंसार, क्या तुम इस पर राज़ी नहीं हो कि लोग भेड़-बकरी ले जाएँ और तुम अल्लाह के रसूल को अपने साथ ले जाओ।

أَتَرْضَوْنَ أَنْ يَذْهَبَ النَّاسُ بِالشَّاةِ وَالبَعِيرِ،
وَتَذْهَبُونَ بِالنَّبِيِّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِلَى رِحَالِكُمْ.

(अल-बुख़ारी, हदीस नंबर 4330)

इसका मतलब दूसरे लफ़्ज़ों में यह था कि दूसरों को अगर मैंने भेड़ बकरी दी है तो तुम्हें तो मैंने ख़ुद अपने आपको दे दिया है यानी अल्लाह के रसूल को।

यह इंसान की आम कमज़ोरी है कि वह अपने मिले हुए को नहीं देख पाता और दूसरे को जो कुछ मिले, वह उसे बहुत ज़्यादा नज़र आता है। फ़ितरत के क़ानून के मुताबिक़ हमेशा ऐसा होता है कि मिली हुई चीज़ बज़ाहिर ज़्यादा होती है और न मिली हुई चीज़ बज़ाहिर कम। ऐसी हालत में मज़्कूरा क़िस्म का मिज़ाज बेहद ख़तरनाक है। इसका नतीजा यह होगा कि आदमी के अंदर से शुक्र का जज़्बा निकल जाएगा, वह ना-शुक्री में जीने लगेगा और यह नुक़सान बिला शुब्हा तमाम नुक़्सानात से ज़्यादा है। जो चीज़ आदमी के अंदर ना-शुक्री पैदा करे, उसके ग़लत होने में कोई शक नहीं।

दीन में सबसे ज़्यादा अहमियत यह है कि इंसान अपने रब का शुक्रगुज़ार बंदा बने। उसके सुबह-ओ-शाम शुक्र की नफ़्सियात में बसर होते हों, लेकिन ज़रूरी है कि आदमी इस मामले में अपने शुक्र

की हिफ़ाज़त करे। शुक्र की हिफ़ाज़त करने से शुक्र बाक़ी रहेगा और हिफ़ाज़त न करने से शुक्र का एहसास आदमी के अंदर से रुख़्सत हो जाएगा। ऐसा उसी वक़्त हो सकता है, जबकि आदमी हर लम्हा अपना निगराँ बना रहे।

शुक्र या सरकशी

एक अच्छी चीज़ आपको मिलती है, इसे अगर आप अपनी मेहनत और क़ाबिलियत का नतीजा समझें तो आपके अंदर सरकशी का जज़्बा पैदा होगा और अगर आप इसे खुदा की तरफ़ से मिली हुई चीज़ समझें तो आपके अंदर शुक्र का जज़्बा जाग उठेगा। पहली कैफ़ियत का नाम गुमराही है और दूसरी कैफ़ियत का नाम हिदायतयाबी।

मौजूदा दुनिया को इम्तिहान की मस्लहत के तहत बनाया गया है। दुनिया के तमाम वाक़यात बिला शुब्हा अल्लाह की मर्ज़ी से और उसकी प्लानिंग के तहत हो रहे हैं, मगर तमाम वाक़यात पर अस्बाब का पर्दा डाल दिया गया है। आदमी का इम्तिहान यह है कि वह अस्बाब के ज़ाहिरी पर्दे को हटाकर असल वाक़ये को देखे और उस पर ईमान लाए।

आपके अंदर एक चीज़ की तलब पैदा होती है। आप उसके लिए कोशिश शुरू करते हैं। आपकी कोशिश मुख़्तलिफ़ मरहले से गुज़रती है। कहीं आप अपना ज़ेहन इस्तेमाल करते हैं, कहीं अपनी अमली ताक़त लगाते हैं और कहीं अपनी पूँजी ख़र्च करते हैं। इस तरह ज़ाहिरी अस्बाब के रास्ते से गुज़रती हुई आपकी कोशिश अपने अंजाम तक पहुँचती है। आप अपने मक़सूद को पा लेते हैं।

अब अगर आपको सिर्फ़ ज़ाहिर को देखने वाली निगाह हासिल है तो आप अपनी कामयाबी को अपनी कोशिश का नतीजा समझेंगे, लेकिन अगर आपको वह निगाह हासिल हो, जो बातों को उसकी

गहराई के साथ देख सके तो आप जान लेंगे कि जो हुआ, वह ख़ुदा के करने से हुआ, यह मेरा कोई ज़ाती कारनामा नहीं।

यही वह मुक़ाम है, जहाँ आदमी का इम्तिहान हो रहा है। आदमी पर लाज़िम है कि वह ज़ाहिरी पर्दे को फाड़कर अंदरूनी हक़ीक़त को देखे। बज़ाहिर अपने हाथ से होने वाले काम के बारे में यह दरियाफ़्त करे कि वह हक़ीक़त में ख़ुदा के ज़रिये अंजाम पा रहा है।

जो लोग इस बसीरत (insight) का सबूत दे सकें, वही मारिफ़त वाले लोग हैं और जो लोग इस बसीरत का सबूत न दें, वही वे लोग हैं, जो मारिफ़त से महरूम रहे।

शुक्र और संजीदगी

क़ुरआन की सूरह 'अल-अहकाफ़' में एक बंदा-ए-सालेह की दुआ इन अल्फ़ाज़ में आई है—

قالَ رَبِّ أَوزِعني أَن أَشكُرَ نِعمَتَكَ الَّتي أَنعَمتَ عَلَيَّ وَعَلىٰ والِدَيَّ وَأَن أَعمَلَ صالِحًا تَرضاهُ وَأَصلِح لي في ذُرِّيَّتي.

"ऐ मेरे रब, मुझे तौफ़ीक़ दे कि मैं तेरे एहसान का शुक्र अदा करूँ, जो तूने मुझ पर किया और मेरे माँ-बाप पर किया और यह कि मैं वह नेक आमाल करूँ, जिससे तू राज़ी हो और मेरी औलाद में भी मुझे नेक औलाद दे। मैंने तेरी तरफ़ रुजू किया और मैं फ़रमाबरदारों में से हूँ।" (46:15)

सूरह 'अल-नमल' (आयत 19) में अल्फ़ाज़ के मामूली फ़र्क़ के साथ यही दुआ हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम के हवाले से आई है। इस दुआ के ज़रिये एक संजीदा इंसान को यह तालीम दी गई है कि जब

उसे नेमत मिले तो उसका हाल क्या होना चाहिए। आम तौर पर लोगों का हाल यह होता है कि जब उन्हें कोई नेमत मिलती है तो वे उसका क्रेडिट ख़ुदा को नहीं देते हैं, बल्कि अपनी ज़ात को इसका क्रेडिट देते हैं। इस क़िस्म का कोई बड़ा वाक़या एक आम इंसान को फ़ख़्र-ओ-ग़ुरूर में मुब्तला करने के लिए काफ़ी होता है, मगर एक बंदा-ए-सालेह, जिसे ख़ुदा की मारिफ़त हासिल हुई हो, अल्लाह से ताल्लुक़ क़ायम होने के बाद उसके अंदर अपने हक़ीक़ी रब के लिए एतिराफ़ का जज़्बा उभरता है। वह नेमत को देखकर सरापा शुक्र बन जाता है। जो कुछ बज़ाहिर उसे ज़ाती मेहनत से हासिल होता है, उसे भी वह पूरे तौर पर ख़ुदा के ख़ाने में डाल देता है। यही हर संजीदा इंसान का तरीक़ा होना चाहिए। इसी एतिराफ़ का शरई नाम शुक्र है यानी किसी नेमत के हासिल होने पर नेमत अता करने वाले के लिए दिल की गहराई से क़द्र-दानी का इज़्हार है।

जहाँ शुक्र न हो, यक़ीनी तौर पर वहाँ दीन भी न होगा। इस दुनिया के अंदर शुक्र के आइटम इतने ज़्यादा हैं कि उन्हें गिना नहीं जा सकता है (सूरह अन-नहल, 16:18)। अगर इंसान संजीदा हो तो नेमत का एहसास इंसान के अंदर शुक्र व हम्द के चश्मे जारी कर देता है। यही अल्लाह से ताल्लुक़ का ख़ुलासा है।

इंसान के अंदर यह कमज़ोरी है कि उसकी नफ़्सियात में किसी कैफ़ियत का सिलसिला जारी नहीं रहता। इंसान से यह मतलूब है कि वह हमेशा शुक्र-ए-ख़ुदावंदी की कैफ़ियात में ज़िंदगी गुज़ारे। इसलिए इंसान पर मुख़्तलिफ़ क़िस्म के ना-ख़ुशगवार हालात लाए जाते हैं, ताकि उसके ज़रिये इंसान के अंदर नेमत और उसके अता करने वाले की अहमियत का एहसास उभरे, ताकि आदमी कभी शुक्र की कैफ़ियत से ख़ाली न होने पाए, वह इस दुनिया में रहते हुए हर तजुर्बे के बाद शुक्र का रेस्पॉन्स देता रहे।

इस दुनिया में इंसान को अपने वजूद से लेकर 'लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम' तक जो चीज़ें मिली हैं, वे सब-के-सब अल्लाह का अतिया हैं। इंसान के लिए ज़रूरी है कि वह अपने पूरे दिलोजान के साथ इन इनामात के अता करने वाले का एतिराफ़ करे।

बे-ख़बर इंसान

नवंबर, 2004 में बंबई के लिए मेरा एक सफ़र हुआ। इस सफ़र में एक बड़ा इबरतनाक वाक़या मालूम हुआ। मुंबई में नीतू मांडके नामी एक डॉक्टर थे। 2003 में उनका इंतिक़ाल हो गया। वे कार्डियोलॉजी के बहुत बड़े माहिर समझे जाते थे। सर्जरी में उन्हें कमाल हासिल था। उन्होंने बहुत-से दिल के मरीज़ों की कामयाब सर्जरी की थी। आख़िर में इन्हें अपने फ़न पर बहुत ग़ुरूर आ गया था, यहाँ तक कि वे ख़ुदा के मुनकिर बन गए।

एक साहब ने बताया कि डॉक्टर साहब ने एक बार एक मुस्लिम ख़ातून के दिल का ऑप्रेशन किया। ऑप्रेशन से सेहतयाबी के बाद मुस्लिम ख़ातून ने डॉक्टर साहब से मुलाक़ात की और बात करते हुए यह कहा कि ख़ुदा का शुक्र है कि ऑप्रेशन कामयाब रहा। डॉक्टर साहब ने कहा कि इसमें ख़ुदा की क्या बात है? तुम पैसा दो और मैं तुम्हें सेहत दूँगा।

Give me money and I will give you cure.

वे एक ऑप्रेशन का मुआवज़ा तीन लाख रुपये लेते थे। अजीब बात यह है कि ख़ुद उनका इंतिक़ाल दिल के दौरे से हुआ। वे अपनी क़ीमती कार में सफ़र कर रहे थे, हिंदूजा हॉस्पिटल पहुँचे कि अचानक उन्हें दिल का दौरा पड़ा। उन्हें फ़ौरन अस्पताल ले जाया गया, इत्तिफ़ाक़

से वहाँ उस वक़्त जो स्टाफ़ था, वह उन्हें पहचानता न था। चुनाँचे अस्पताल में उनके साथ बे-तवज्जोही का मामला हुआ। वे बेबसी के साथ चिल्लाते रहे कि मैं डॉक्टर मांडके हूँ, मगर न जानने की बिना पर वहाँ बर-वक़्त उनका सही इलाज न हो सका और अस्पताल ही में उनका ख़ात्मा हो गया।

मुंबई के एक दूसरे सर्जन डॉक्टर कामरान से मुलाक़ात हुई। उन्होंने बताया कि इंसान के जिस्म में एक ख़ास उंसुर (element) होता है। यही ऑप्रेशन के बाद ज़ख़्म भरने का सारा काम करता है। अगर यह उंसुर न हो तो तमाम सर्जन बेरोज़गार हो जाएँ। डॉक्टर मांडके अगर इस पूरी हक़ीक़त पर ग़ौर करते तो वह हर सर्जरी के बाद अपने आजिज़ी को दरियाफ़्त करते, लेकिन ग़ौर-ओ-फ़िक्र न करने की वजह से वह बरअक्स तौर पर सर्जरी के वाक़ये में अपनी महारत देखते रहे। इसलिए ऐसा हुआ कि जिस वाक़ये में उन्हें इज्ज़ की ग़िज़ा मिल रही थी, उससे वह ग़लत तौर पर किब्र की ग़िज़ा लेते रहे और आख़िरकार इसी बे-ख़बरी के साथ उनका ख़ात्मा हो गया।

मौजूदा ज़माने में यह मिज़ाज बहुत ज़्यादा आम हो चुका है, नेमतों का इस्तेमाल, लेकिन नेमतें अता करने वाले का एतिराफ़ नहीं। हर इंसान मुकम्मल तौर पर आजिज़ है, मगर वह अपने आपको क़ादिर समझ लेता है। इसका सबब यह है कि वह ग़ौर-ओ-फ़िक्र से काम नहीं लेता। हक़ीक़त यह है कि इस दुनिया में हर काम बाहरी अस्बाब की रियायत के ज़रिये अंजाम पाता है। आपकी ज़िंदगी में 99 फ़ीसद से ज़्यादा हिस्सा ख़ुदा का है और एक फ़ीसद से भी कम हिस्सा आपकी अपनी कोशिश का। ऐसी हालत में इंसान के अंदर एतिराफ़ (शुक्र) का जज़्बा ख़ुदा के लिए होना चाहिए, न कि अपनी ज़ात के लिए, मगर अजीब बात है कि इस मामले में तमाम दुनिया के लोग बे-ख़बरी में मुब्तला हैं।

ग़ौर किया जाए तो मालूम होगा कि मौजूदा ज़माने में ख़ुदा ने इंसान को निहायत क़ीमती चीज़ें अता की हैं, जो क़दीम ज़माने में बादशाहों को भी हासिल नहीं थीं, मगर मेरे तजुर्बे के मुताबिक़, ज़्यादातर लोग उनका सिर्फ़ ग़लत इस्तेमाल करते हैं। मसलन जदीद कम्युनिकेशन ख़ुदा की एक अज़ीम नेमत है, मगर ग़ालिबन इस नेमत का तक़रीबन 95 फ़ीसद हिस्सा सिर्फ़ बे-फ़ायदा या ग़लत मक़ासिद के लिए इस्तेमाल हो रहे है और जहाँ तक कि इस नेमत पर शुक्र का ताल्लुक़ है, वह तो मैंने अपने तजुर्बे में हक़ीक़ी तौर पर किसी के अंदर पाया ही नहीं, न मज़हबी लोगों में और न सेकुलर लोगों में। इस मामले में दोनों की हालत एक है। अपने दीन को जाँचने का मेयार यह है कि आप देखिए कि आपके अंदर शुक्र की नफ़्सियात है या नहीं।

ना-शुक्री नहीं

सहाबी-ए-रसूल अबू हुरैरा रजियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया—

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ يَقُولُ:قَالَ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ:إِذَا أَحَبَّ أَحَدُكُمْ أَنْ يَعْلَمَ قَدْرَ نِعْمَةِ اللهِ عَلَيْهِ، فَلْيَنْظُرْ إِلَى مَنْ هُوَ تَحْتَهُ، وَلَا يَنْظُرْ إِلَى مَنْ هُوَ فَوْقَهُ

"जब तुममें से कोई अपने ऊपर अल्लाह की नेमत का अंदाज़ा करना चाहे तो वह उसे देखे, जो इससे कमतर हो और वह उसे न देखे, जो इससे बरतर हो।"

(अल-ज़ुहद वल-रक़ाएक़ इब्न अल-मुबारक, हदीस नंबर 1433)

ख़ुदा के मंसूबा-ए-तख़्लीक़ के मुताबिक़, दुनिया की चीज़ों की तक़्सीम में बराबरी नहीं। यहाँ किसी को कम मिला है और किसी को ज़्यादा। किसी को एक चीज़ दी गई है और किसी को दूसरी चीज़। इस सूरत-ए-हाल ने दुनियावी मामलात में एक शख़्स और दूसरे शख़्स के दरमियान फ़र्क़ कर दिया है। अब अगर आदमी अपना मुक़ाबला उस शख़्स से करे, जो बज़ाहिर उसे अपने से कम नज़र आता है तो उसके अंदर शुक्र का जज़्बा पैदा होगा। इसके बरअक्स अगर आदमी अपना मुक़ाबला उस शख़्स से करने लगे, जो बज़ाहिर उसे अपने से ज़्यादा दिखाई देता है तो उसके अंदर ना-शुक्री का एहसास उभरेगा। इस नफ़्सियाती ख़राबी से बचने का आसान हल यह बताया गया है कि हर आदमी उसे देखे, जो उसके नीचे है और वह उसे न देखे, जो उसके ऊपर है।

शेख़ सादी ने लिखा है कि मेरे पाँव में जूते नहीं थे। मैंने कुछ लोगों को जूता पहने हुए देखा। मुझे ख़याल आया कि देखो, ख़ुदा ने उन्हें जूता दिया और मुझे बग़ैर जूते के रखा। वे इसी ख़याल में थे कि उनकी नज़र एक शख़्स पर पड़ी, जिसका एक पाँव कटा हुआ था। यह देखकर उन्होंने अल्लाह का शुक्र अदा किया कि उसने उन्हें उससे बेहतर बनाया और उन्हें दो तंदुरुस्त पाँव अता किए। अल्लाह तआला को अपने हर बंदे से यह मतलूब है कि वह उसका शुक्रगुज़ार बने, मगर मौजूदा दुनिया में शुक्रगुज़ार वही शख़्स रह सकता है, जो इस एतिबार से अपना निगराँ बन गया हो। मिले हुए पर शुक्र का जज़्बा आदमी के अंदर हौसला पैदा करता है। न मिले हुए पर शिकायत का ज़ेहन आदमी को झुँझलाहट और मायूसी में मुब्तला कर देता है।

दौर-ए-साइंस, दौर-ए-शुक्र

माहनामा 'पॉपुलर साइंस' न्यूयॉर्क, अमरीका से शाए होने वाली एक मैगज़ीन है। यह मैगज़ीन 1872 में शुरू हुई और आज तक जारी है। इसके क़दीम शुमारे 'गूगल बुक्स' में मौजूद हैं। इसके एक क़दीम शुमारे (मार्च, 1956; सफ़्हा 2) में एक पैराग्राफ़ इन अल्फ़ाज़ में था—

From Atom to Star: Research at Bell Telephone Laboratories ranges from the ultimate structure of solids to the radio signals from outer space. Radio interference research created the new science of radio astronomy; research in solids produced the transistor and the Bell Solar Battery. Between atoms and stars lie great areas of effort and achievement in physics, electronics, metallurgy, chemistry and biology. Mechanical engineers visualize and design new devices.

इस मज़मून में एक अमरीकी कंपनी बेल टेलीफ़ोन लेबोरेटरी में होने वाली साइंसी रिसर्च का ज़िक्र किया गया है यानी ऐटम से लेकर सितारे तक इंसानी जद्दोजहद और बड़े काम अंजाम देने के लिए फिज़िक्स, इलेक्ट्रॉनिक्स, मैटालर्जी, कैमिस्ट्री और बायोलॉजी का बहुत बड़ा मैदान मौजूद है। इस साइंसी लेबोरेटरी में मैकेनिकल इंजीनियर नए आलात का ख़ाका बनाते हैं और डिज़ाइन तैयार करते हैं।

एक सेकुलर इंसान की हद यहाँ पर ख़त्म हो जाती है, लेकिन अहले-ईमान की एक और हद है। वह है कायनाती निशानियों से मारिफ़त और शुक्र की ग़िज़ा हासिल करना। मौजूदा ज़माने में साइंसी तरक़्क़ियों ने एक बहुत बड़ा काम अंजाम दिया है। उसने मारिफ़त

और शुक्र के लिए एक नया ला-महदूद मैदान खोल दिया है। मसलन परिंदों का फ़िज़ा में उड़ना क़ुदरत-ए-इलाही की एक अज़ीम निशानी है। क़दीम ज़माने में क़ुदरत-ए-इलाही की इस निशानी को सिर्फ़ पुर-असरार अक़ीदे के तहत समझा जाता था, मगर आज उसे एक साइंसी हक़ीक़त के तौर पर समझा जा सकता है। अब साइंसी दौर में हम कह सकते हैं कि आज जब एक हवाई जहाज़ फ़िज़ा में उड़कर एक जगह से दूसरी जगह पहुँचता है तो उसके लिए हवाई जहाज़ से बाहर एक बहुत बड़ा इंफ्रास्ट्रक्चर दरकार होता है। यही मामला तमाम कायनाती इंफ्रास्ट्रक्चर का है, जो तमाम नुक़्स से पाक (zero-defect) होकर ज़मीन के लिए 'लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम' का काम कर रहा है। यह बिला शुब्हा शुक्र का बहुत अज़ीम आइटम है। (डॉक्टर फ़रीदा ख़ानम)

आलमी शुक्र

इस्लाम में इंसानों का शुक्र अदा करने को बहुत ज़्यादा अहमियत दी गई है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बार-बार इंसानों का शुक्र अदा करने की ताकीद की है। मसलन एक हदीस-ए-रसूल यह है—

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ، عَنِ النَّبِيِّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ:لَا يَشْكُرُ اللهَ مَنْ لَا يَشْكُرُ النَّاسَ.

"अबू हुरैरा की रिवायत के मुताबिक़, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कहा— उसने अल्लाह का शुक्र अदा नहीं किया, जो इंसानों का शुक्र अदा नहीं करता।"

(मुस्नद अहमद, हदीस नंबर 8019)

इस हदीस का एक और मतलब भी है, जिसे इब्न अल-असीर अल-जज़री (वफ़ात : 606 हिजरी) ने इन अल्फ़ाज़ में बयान किया है—

إن اللهَ لَا يَقْبَلُ شُكْرَ الْعَبْدِ عَلَى إِحسانه إِليه، إِذا كَانَ الْعَبْدُ لَا يَشكُرُ إِحسانَ النَّاسِ ويَكْفُر معروفَهم.

"अल्लाह उस बंदे का शुक्र क़ुबूल नहीं करेगा, किसी एहसान पर, अगर वह बंदा इंसानों के एहसानात का शुक्र अदा न करे या उनके एहसानात का इनकार करे।"

(जामे अल-उसूल, जिल्द 2, सफ़्हा 559)

ग़ौर से देखा जाए तो इस हदीस में शुक्र का एक आलमी हुक्म बयान किया गया है यानी दुनिया के तमाम इंसानों का शुक्रगुज़ार होना और उनके लिए दिल में मनफ़ी सोच न रखना। क़दीम दौर में इंसान एक-दूसरे पर महदूद मानों में निर्भर होता था, मगर मॉडर्न ज़माने को आलमी तौर पर आपसी निर्भरता (global interdependence) का दौर कहा जाता है। कोई इंसान किसी दूसरे इंसान से बेनियाज़ नहीं, हर इंसान दूसरे इंसान का मोहताज है। ख़्वाह वह डायरेक्ट तौर पर हो या इनडायरेक्ट तौर पर।

इसी हक़ीक़त को मौलाना वहीदुद्दीन ख़ाँ साहब ने इन अल्फ़ाज़ में बयान किया है— अल्लाह ने इंसानी तारीख़ में ऐसे अस्बाब पैदा किए कि इंसानों के दरमियान एक नई 'डाइकोटॉमी' वजूद में आ गई। वह थी, दोस्त और समर्थक की डाइकोटॉमी यानी जो लोग दोस्त थे, वे तो दोस्त ही थे, लेकिन जो लोग दोस्त न थे, वे अमलन समर्थक बन गए। यह तब्दीली इस तरह आई कि डेमोक्रेसी और टेक्नोलॉजी के ज़रिये ऐसे हालात पैदा हुए कि हर आदमी का मफ़ाद दूसरे आदमी के साथ जुड़ गया। पॉलिटिकल लीडर का इंटरेस्ट वोटर से और वोटर

का इंटरेस्ट पॉलिटिकल लीडर से... टीचर का इंटरेस्ट स्टूडेंट्स से और स्टूडेंट्स का इंटरेस्ट टीचर से वग़ैरह। इस तरह दुनिया में एक नया एक-दूसरे पर निर्भरता का कल्चर (interdependent culture) वजूद में आया (अल-रिसाला; सितंबर, 2017)।

क़दीम ज़माने में भी इंसान एक-दूसरे पर निर्भर करता था, मगर वह बहुत ही महदूद पैमाने पर था। मौजूदा ज़माने में यह ज़ाहिरा, मौलाना वहीदुद्दीन ख़ां साहब के अल्फ़ाज़ में, अपने नुक़्ता-ए-इंतिहा (culmination) को पहुँच गया है। मौजूदा ज़माना मुकम्मल तौर पर आपसी फ़ायदे (mutual interest) के उसूल पर क़ायम है। मौजूदा ज़माने में इंडस्ट्रियल कल्चर के फैलाव के नतीजे में ऐसा हुआ है कि दुनिया में आपसी निर्भरता का दौर आ गया है। अब हर एक को ख़ुद अपने मफ़ाद के तहत दूसरे की ज़रूरत है। मसलन ताजिर को ग्राहक की ज़रूरत है और ग्राहक को ताजिर की। वकील को क्लाइंट की ज़रूरत है और क्लाइंट को वकील की। डॉक्टर को मरीज़ की ज़रूरत है और मरीज़ को डॉक्टर की। लीडर को वोटर की ज़रूरत है और वोटर को लीडर की। कंज़्यूमर को बाज़ार की ज़रूरत है और बाज़ार को कंज़्यूमर की। कमर्शियल सवारी को मुसाफ़िर की ज़रूरत है और मुसाफ़िर को कमर्शियल सवारी की। होटल को टूरिस्ट की ज़रूरत है और टूरिस्ट को होटल की। इंडस्ट्री को ख़रीदार की ज़रूरत है और ख़रीदार को इंडस्ट्री की वग़ैरह। (अल-रिसाला; सितंबर, 2017)

इस वाक़ये की एक मिसाल रूस और यूक्रेन की जंग है, जो फ़रवरी, 2022 में शुरू हुई और इस मज़मून के लिखे जाने (31 जुलाई, 2022) तक जारी है। इस जंग की वजह से पूरी दुनिया में महँगाई बढ़ चुकी है। हालाँकि यूक्रेन और रूस ज़मीन के एक महदूद जियोग्राफ़ी रक़्बे में मौजूद हैं। महँगाई का वाक़ये आलमी तौर पर बाहमी डिपेंडेंसी को

ज़ाहिर करता है। इसी तरह साइंसी टेक्नोलॉजी तमामतर मग़रिब की ईजाद है, मगर इससे सारी दुनिया फ़ायदा उठा रही है। आलमी डिपेंडेंसी की एक और मिसाल 2019 में चीन के एक शहर से फैलने वाली कोरोना की वबा है, जिसने देखते-ही-देखते सारी दुनिया को अपनी लपेट में ले लिया। फिर उस वबा से बचाव के लिए हर इंसान ने ख़ुद से वैक्सीन तैयार नहीं की, बल्कि बाज़ ममालिक की कुछ कंपनियों ने तैयार की और इसे सारी दुनिया के इंसानों को लगाया गया वग़ैरह। आलमी इन्हिसार (global interdependence) का यह ज़ाहिरा बताता है कि मौजूदा दौर में हर इंसान को दूसरे इंसान का शुक्रगुज़ार होना चाहिए। (डॉक्टर फ़रीदा ख़ानम)

मैं ख़ुदा का कितना मक़रूज़ हूँ

यह इटली का वाक़या है। कोरोना वायरस का एक 93 साला मरीज़ जब अस्पताल में अच्छा हो गया तो अस्पताल वालों ने उससे सिर्फ़ एक दिन का वेंटिलेटर का बिल अदा करने के लिए कहा, जो कि 500 यूरो था। मरीज़ बे-तहाशा रोने लगा। डॉक्टर घबरा गए। उन्होंने कहा कि आप बिल के लिए परेशान न हों। बूढ़े इंसान ने जो जवाब दिया, उससे अस्पताल के डॉक्टर और स्टाफ़ भी रोने लगे। उसने कहा कि मैं इस रक़म के लिए नहीं रो रहा हूँ। मैं आसानी से पैसा अदा कर सकता हूँ। मैं इसलिए रो रहा हूँ कि मैं 93 साल से ख़ुदा की इस सेहतबख़्श हवा में साँस ले रहा हूँ, लेकिन मैंने कभी उसका बिल अदा नहीं किया और अस्पताल में सिर्फ़ एक दिन के लिए वेंटिलेटर का इस्तेमाल किया तो इसका बिल 500 यूरो लग रहा है। आप समझ सकते हैं कि मैं ख़ुदा का कितना ज़्यादा मक़रूज़ हूँ। इसके लिए मैंने कभी ख़ुदा का शुक्र अदा नहीं किया।

In Italy, a 93 year old gentleman was on the ventilator in ICU fighting for the Coronavirus and survived. When his Doctor told him that he is billed for 500 Euro for one day ventilator use, he cried. The Doctor tried to comfort him he should not feel sad for the cost. What the old man responded made the hospital workers weep. The old man explained: "I am not crying because of the money I have to pay. Thankfully I am able to afford it. I am crying for another reason. I cried because I've just come to realize after all these many years on earth I've been breathing God's air for 93 years, yet I have never had to pay for it. It seems it takes over Euro 500 to use a ventilator in the hospital for one day. Do you know how much I owe God. Why haven't I ever truly thanked Him all the days of my life for the miracle of this divine gift which I took for granted". (https://bit.ly/3oONJjW)

इस दुनिया में इंसान को अपने वजूद से लेकर 'लाइफ़ सपोर्ट सिस्टम' तक जो चीज़ें मिली हैं, वे सब-के-सब अल्लाह का यकतरफ़ा अतिया हैं। इंसान के लिए ज़रूरी है कि वह पूरे दिलोजान के साथ इन इनामात के देने वाले का शुक्र करे। (डॉक्टर फ़रीदा ख़ानम)

शुक्र की हक़ीक़त

शुक्र यह है कि आदमी ख़ुदा की नेमतों का एतिराफ़ करे। यह एतिराफ़ असलन दिल में पैदा होता है और फिर वह अल्फ़ाज़ की सूरत में आदमी की ज़बान पर आ जाता है।

इंसान को ख़ुदा ने बेहतरीन जिस्म और दिमाग़ के साथ पैदा किया। उसकी ज़रूरत की तमाम चीज़ें बड़े पैमाने पर मुहैया की। ज़मीन-ओ-आसमान की तमाम चीज़ों को इंसान की ख़िदमत में लगा दिया। ज़मीन पर ज़िंदगी गुज़ारने या समाजी ज़िंदगी की तामीर करने के लिए जो-जो चीज़ें मतलूब थीं, वह सब भरपूर मिक़दार में यहाँ मुहैया कर दी। इंसान हर लम्हा इन नेमतों का तजुर्बा करता है। इसलिए इंसान पर लाज़िम है कि वह हर लम्हा ख़ुदा की नेमतों पर शुक्र करे। उसका क़ल्ब ख़ुदा की नेमतों के एहसास से सरशार रहे।

शुक्र की असल हक़ीक़त एतिराफ़ है। जिस चीज़ को इंसान के सिलसिले में एतिराफ़ कहा जाता है, उसी का नाम ख़ुदा की निस्बत से शुक्र है। एतिराफ़ का लफ़्ज़ इंसान के मुकाबले में बोला जाता है और शुक्र का लफ़्ज़ ख़ुदा के मुकाबले में। शुक्र तमाम इबादतों का ख़ुलासा है। इबादत की तमाम सूरतें दरअसल शुक्र के जज़्बे ही की अमली तस्वीर हैं। शुक्र सबसे ज़्यादा वसीअ और सबसे ज़्यादा कामिल इबादत है। शुक्र ख़ुदा-परस्ताना ज़िंदगी का ख़ुलासा है।

शुक्र का ताल्लुक़ इंसान के पूरे वजूद से है। इब्तिदाई तौर पर आदमी अपने दिल और अपने दिमाग़ में शुक्र के एहसास को ताज़ा करता है, फिर वह अपनी ज़बान से बार-बार उसका इज़्हार करता है। इसके बाद जब शुक्र के जज़्बात क़वी हो जाते हैं तो इंसान अपने माल और अपने असासा को इज़्हार-ए-शुक्र के तौर पर ख़ुदा की राह में ख़र्च करने लगता है। इसी तरह उसका जज़्बा-ए-शुक्र उसे मजबूर करता है कि वह अपने वक़्त और अपनी ताक़त को उस ख़ुदा की राह में सर्फ़ करे जिसने उसे वक़्त और ताक़त का यह सरमाया दिया है। हमारा वजूद पूरा-का-पूरा ख़ुदा का दिया हुआ है। हम एक ऐसी दुनिया में जीते हैं, जो सब-का-सब ख़ुदा का अतिया है। इसी हक़ीक़त के एतिराफ़ और इज़्हार का दूसरा नाम शुक्र है।

No. 50760/90

शांति और आध्यात्मिकता पर और किताबें।

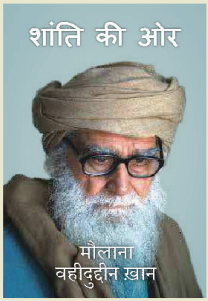

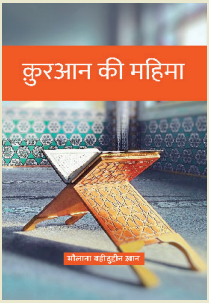

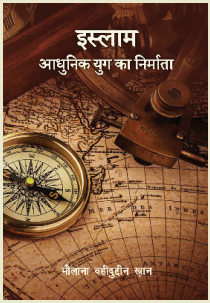

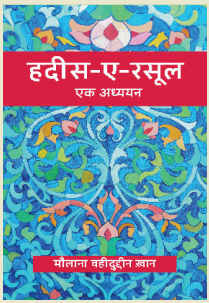

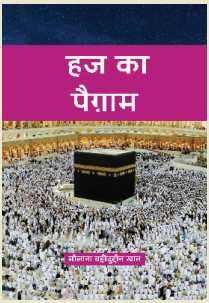

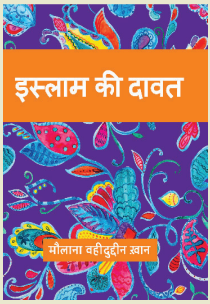

आध्यात्मिक सेट

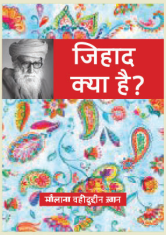

₹30/-

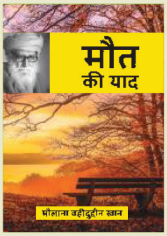

₹40/-

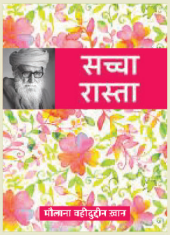

₹20/-

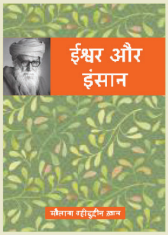

₹40/-

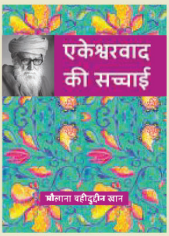

₹30/-

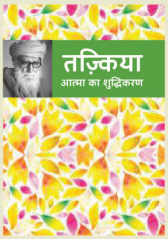

₹45/-

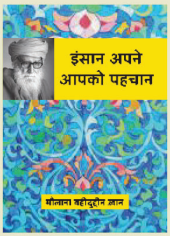

₹20/-

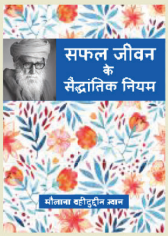

₹40/-